SUPREME AUDIT INSTITUTION OF INDIA
लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा
Dedicated to Truth in Public Interest

गिरनार

सत्यमेव जयते
Government of India

41 वां अंक

(अर्ध-वार्षिक पत्रिका)

कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी), गुजरात, राजकोट-360001

गिरनार पर्वत

गिरनार गुजरात के जूनागढ़ में स्थित एक प्राचीन पहाड़ी है। यह हिंदू एवं जैन धर्म के पवित्र तीर्थ स्थलों में से एक है। कहा जाता है कि यहाँ 22 वें तीर्थंकर नेमिनाथ जी ने 533 प्रबोधन प्राप्त सन्यासियों के साथ सर्वज्ञान की अनुभूति एवं निर्वाण को प्राप्त किया था। प्राचीन काल से ही इस स्थान का जैन और हिंदुओं के लिए इसके मंदिरों के कारण एक विशेष धार्मिक महत्व रहा है।

गिरनार पर्वत के चारों ओर 36 कि.मी. तक की जानी वाली परिक्रमा लिली परिक्रमा के नाम से जानी जाती है और आध्यात्मिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण है। यह हिंदू कैलेंडर के अनुसार कार्तिक शुक्ल पक्ष एकादशी से कार्तिक शुक्ल पक्ष पूर्णिमा (नवंबर) के दौरान आयोजित की जाती है एवं यह भवनाथ मंदिर से शुरू होती है। दुनिया भर से भक्त, आध्यात्मिक साधक और पर्यटक यहाँ के मेले का आनंद लेते देखे जा सकते हैं। गिरनार पर्वत की तलहटी में नागा साधुओं द्वारा महाशिवरात्रि का मेला हर्षोल्लास से मनाया जाता है।

|| गिरनार ||

वर्ष 2025-26 अंक-41

<u>मुख्य संरक्षक</u>

श्री हिमांशु काश्यप धर्मदर्शी, प्रधान महालेखाकार

<u>संरक्षक:</u>

श्री गोपाल लाल मीना, व. उप महालेखाकार (ले.एवं ह.)
शाखा कार्यालय, अहमदाबाद
श्री डेनिस डेनियल, उप महालेखाकार/प्रशासन, राजकोट कार्यालय
श्री नेमा राम, उप महालेखाकार/एफ.ए.वी. राजकोट कार्यालय

<u>संपादक मण्डल:</u>

श्री आशीष कुमार यादव (वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी)
श्री दीपक पेडीवाल (सहायक लेखा अधिकारी)
श्री गौरव उदेनियाँ (सहायक लेखा अधिकारी)
सुश्री बबीता राघव (वरिष्ठ हिंदी अनुवादक)
श्री सोमदत्त यादव (कनिष्ठ हिंदी अनुवादक)

<u>**संपादकीय**</u>

कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी), गुजरात, राजकोट की हिंदी पत्रिका **'गिरनार' का** यह **41 वां** अंक आप सभी को सहर्ष प्रस्तुत है। पूर्व के प्रयासों की निरंतरता को यथावत रखते हुए पत्रिका के इस अंक में मुख्य पृष्ठ पर गुजरात के प्रसिद्ध **'गिरनार'** पर्वत तथा अंतिम पृष्ठ पर **मोरबी रियासत** की झलक है।

इस पत्रिका में कार्यालय के सदस्यों ने स्वरचित अपने अनुभवों, यात्रा वृत्तांत, सांस्कृतिक धरोहर संबंधी रचनाओं तथा लेखों एवं कविताओं के माध्यम से अपने विचारों को प्रस्तुत करने का सराहनीय प्रयास किया है।

संरक्षक व संपादक मण्डल कार्यालय के सदस्यों से आह्वान करते हैं कि अधिकाधिक संख्या में स्वरचित रचनाएं उपलब्ध करवाते रहने का प्रयास करते रहें, जिससे आगे भी **'गिरनार'** पत्रिका के अंक प्रकाशित होते रहें।

आशा है कि पत्रिका का ये अंक भी आपको पसंद आएगा।

अस्वीकरण- इस अंक में सम्मिलित रचनाओं में व्यक्त विचारों का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष उत्तरदायित्व स्वयं रचनाकार का है, जिनसे संपादक मण्डल या कार्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अनुक्रमणिका

क्र.सं	नाम और पदनाम	शीर्षक	रचना	पृष्ठ
1.	श्री अंकुश शर्मा, लेखाकार	आखिरी सुनवाई से पहले	लेख	1
2.	श्री अभय गुप्ता, लेखाकार	क्यू.आर. कोड वाली चाय	लेख	6
3.	श्री अश्विनी, सहायक लेखा अधिकारी	काश: फिर बचपन लौट आए	कविता	10
4.	सुश्री आरती वार्ष्णेय, लेखाकार	मथुराः कृष्ण नगरी	लेख	11
5.	श्री गोपाल लाल मीना, वरिष्ठ उप महालेखाकार	राजभाषा नीति: उपलब्धियां और चुनौतियां	लेख	14
6.	श्री चंचल कटारा, सहायक लेखा अधिकारी	उज्ज्वल किरणें	लेख	18
7.	श्री दर्शन सिंह तंवर, लिपिक	अहमदाबाद: गुजरात का धकडकता हुआ दिल	लेख	23
8.	श्री नरेन्द्र प्रताप, सहायक लेखा अधिकारी	मेरा सफर: जब दुनिया घूमना रुक गई	लेख	26
9.	श्री नवनीत कुमार, लेखाकार	भारत में महिला सशक्तिकरण	लेख	29
10.	श्री प्रमोद कौरव, सहायक लेखा अधिकारी	गजल	कविता	34
11.	सुश्री प्रिसिल्ला एंटो, वरिष्ठ लेखाकार	खामोश हिम्मत की कहानी	लेख	35

12.	सुश्री बबीता राघव, वरिष्ठ हिंदी अनुवादक	एक रोमांचकारी अनुभव: लेह लद्दाख यात्रा	यात्रा-वृतांत	38
13.	श्री बिजेन्द्र कुमार बेरवाल, सहायक निदेशक (राजभाषा)	हमारी स्वर साम्राज्ञी: सुश्री लता मंगेशकर जी	लेख	42
14.	श्री भूपेन्द्र कुमार, लेखाकार	मैं-पैदाइश पर परिवेश का प्रतिफल	लेख	46
15.	श्री मनीष कुमार, लेखाकार	एक बीमारी कई सवाल	लेख	50
16.	श्री राकेश कुमार, सहायक लेखा अधिकारी	खेती का बदलता स्वरुप और उसके प्रभाव	लेख	53
17.	श्री राहुल धायल, सहायक लेखा अधिकारी	कहानीः बाजार की रफ्तार से धीमी दिल की धड़कन	कविता	57
18.	सुश्री रिंकी कुमारी गुप्ता, सहायक लेखा अधिकारी	परदेस की ज़िंदगी में दोस्ती का सहारा	लेख	60
19.	श्री रितेश कुमार, बहु-कार्य कर्मी	किताबों से दोस्ती	लेख	63
20.	श्री रुपेन्द्र कुमार शर्मा, लेखाकार	वक्त की मार	कविता	66
21.	सुश्री लवी आर्या, सहायक लेखा अधिकारी	सूखी पूरी: अलग होने की ख़ूबसूरती	लेख	69
22	श्री नीरज कुमार विमल, लेखाकार	बचपन	कविता	72
23	श्री शशांक, बहु-कार्य कर्मी	स्वतंत्रता	कविता	73

24	सुश्री श्रेष्ठा राखेचा, आशुलिपिक ग्रेड-।।	कार्य और परिवार के बीच संतुलन	लेख	74
25	श्री सतीश कुमार, सहायक लेखा अधिकारी	सरकारी सेवा में मानवीय संवेदनाएं	लेख	78
26	श्री सुखदेव गोयल, कनिष्ठ हिंदी अनुवादक	आदत: एक जड़ता	लेख	82
27	श्री सुमन सौरभ, बहु-कार्य कर्मी	शिक्षित...युवा सपनों पर बोझ	लेख	86
28.	श्री सोमदत्त यादव, कनिष्ठ हिंदी अनुवादक	भारत में वायु प्रदूषण	लेख	90
29.	श्री स्वराज वर्मा, बहु-कार्य कर्मी	पुरानी चीजों की यादें	लेख	93
30.	श्री हिमांशु काश्यप धर्मदर्शी, प्रधान महालेखाकार	“स्वतंत्रता से पहले की पुकार फ़िल्म ‘क़िस्मत’ का अमर देश भक्ति गीत	लेख	97

श्री अंकुश शर्मा,
लेखाकार

"आखिरी सुनवाई से पहले"

लंच के बाद कोर्ट रूम के बाहर एक लोहे की बैंच पर बैठे राहुल और प्रिया अपनी सुनवाई का इंतज़ार कर रहे थे। यूं तो उनके बीच का फासला महज़ छः इंच का था, पर शायद ये चंद इंच अब सैंकड़ों मीलों तक फैल चुके थे। आज उनके डाइवोर्स केस की आखिरी तारीख थी। जज साहब के फैसले के बाद दोनों के रास्ते अलग-अलग होने वाले थे।

वैसे तो अदालत में चहल-पहल बढ़ रही थी, मगर राहुल और प्रिया के बीच एक अजीब सी खामोशी थी। दोनों शायद एक दूसरे को कुछ कहना चाहते थे, पर अपने अहम को झुकाना किसी को मंजूर नहीं था।

"राहुल बनाम प्रिया" चपरासी ने बाहर आकर आवाज़ दी।

"जी" कहकर दोनों खड़े हो गए।

"अगला नंबर आपका है। तैयार रहिए।" इतना कहकर चपरासी वापस अंदर चला गया।

मानो दो पल को जैसे वक्त कहीं थम सा गया हो। पिछले पाँच साल दोनों की आंखों के सामने एक फ़िल्म की तरह चलने लगे। हर शाम राहुल का ऑफिस से आना और अपने ऑफिस की हर छोटी बड़ी बात प्रिया को सुनाना। प्रिया का हर सुबह राहुल का सारा सामान, उसकी घड़ी, उसका पर्स, बाइक की चाबी, रुमाल, मौजे, खाने का डिब्बा सब मेज़ पर रख कर उसे ये सब चीजें याद दिलाना। जिंदगी

इतनी खुशनुमा थी कि पड़ोसियों को जलन होने लगी थी। "इनके घर से कभी बर्तन बजने की आवाज़ क्यों नहीं आती है?", पर अगले ही पल याद आया कि वो दोनों यहां क्यों हैं। तुम्हें तो तुम्हारे काम से फुरसत ही नहीं है, मेरे लिए वक्त ही नहीं है तुम्हारे पास।" टीवी देखने के अलावा तुम करती ही क्या हो सारा दिन? तुम हमेशा शिकायतें ही करती रहती हो। जब देखो, लड़ने के बहाने ढूंढती रहती हो। घर पर आने से अच्छा है कि मैं ऑफिस में ही रह लूं।

पहले दो साल अच्छे से निकल जाने के बाद दोनों में कुछ दूरियां सी आने लगी थी। लेकिन अब दोनों के पास एक दूसरे को सुनाने और अलग होने के लिए तीन सौ पैंसठ कारण थे। पता नहीं ये कब हुआ। हल्की-फुल्की नोक-झोंक कब बड़े-बड़े झगड़ों में बदल गई, ये दोनों ही नहीं जानते थे। शायद राहुल की पदोन्नति के बाद, जिसके बाद वो देर तक ऑफिस में काम करने लगा था या प्रिया के एक्सीडेंट के बाद, जिसके बाद वो अक्सर बातें भूलने लगी थी या फिर इसके अलावा भी कुछ और। राहुल का ऑफिस से देर से घर आना। उसकी राह देखते-देखते प्रिया का सो जाना। अगली सुबह राहुल का जल्दी से ऑफिस निकल जाना और प्रिया का देर से उठना। सारा दिन न कोई फ़ोन कॉल, न कोई मैसेज। धीरे-धीरे रिश्ते में आती हुई तल्ख़ियां, दिख दोनों को रही थी पर इस बारे में बात करने की पहल कोई नहीं करना चाहता था।

आख़िरी लड़ाई के तीन दिन बाद रविवार की शाम को हिम्मत करके प्रिया ने राहुल से पूछ ही लिया "राहुल, ऐसा कब तक चलेगा?"

"क्या कब तक चलेगा?", राहुल ने भौंहे उठाते हुए कहा।

"तुम अभी भी उस बात को ले कर नाराज़ हो।"

"नहीं तो, कौन सी बात?"

"ज्यादा बनो मत" तुम सब जानते हो मैं किस बारे में बात कर रही हूँ। तुम उस समय आराम से भी तो बात कर सकते थे ना। मैंने तुमसे प्यार से ही पूछा था। तुम्हें कोई ताना तो नहीं दिया था।" अक्सर जब भी लड़ाई होती, तो राहुल लंबी चुप्पी धारण कर लेता था और राहुल की उस लंबी ख़ामोशी से प्रिया अब तंग आ गई थी।

"मैं अपने घर जा रही हूँ।" प्रिया ने उदासी भरे स्वर में राहुल से कहा। राहुल ने ठीक है कहा, मानो उसे कोई फर्क ही न पड़ा हो। उसके बाद प्रिया वापिस नहीं आई, आया तो बस तलाक का एक नोटिस। आख़िरी लड़ाई में हुआ कुछ यूं था कि राहुल ने प्रिया को सोने की अंगूठी गिफ्ट की थी। घर पर आते ही मजाक में प्रिया ने राहुल से कहा कि राहुल, कोई तो पैसों की खान है तुम्हारे पास जो मुझ से छुपा कर रखते हो। प्रिया के बस इतना कहने की देर थी कि राहुल तुनक पड़ा।

"मैंने तुम से आज तक क्या छुपाया है, प्रिया? तुम हर बार यही बोलती हो। महीने की पहली तारीख को तुम्हारे हाथ में सारी तनख्वाह रख देता हूँ। तुम्हें पिछले हफ्ते बताया भी था कि कंपनी मुझे जल्दी बोनस देने वाली है। उसी बोनस से ये अंगूठी बनवाई है। फिर भी तुम मुझ पर शक करती रहती हो।", राहुल ने चिढ़ते हुए कहा। बस यहीं से एक छोटी सी बात राई के पहाड़ में बदल गई थी। हथियारों का घाव तो एक दिन भर जाता है, मगर शब्द, जो ऐसा ज़ख्म देते हैं जो ताउम्र हरे रह जाते हैं। दुनिया में कोई मरहम ऐसा नहीं बना जो शब्दों के घाव का इलाज कर सके।

वर्तमान में, राहुल और प्रिया दोनों इसी बारे में सोच रहे थे कि अचानक उनके सामने वहां से गुज़रते हुए लगभग सत्तर वर्ष के बुज़ुर्ग व्यक्ति ने अपने सीने पर हाथ रखा और लड़खड़ा कर गिर पड़ा। सारे प्रांगण में अफरातफरी मच गई। दोनों उठे और बुज़ुर्ग को

संभालने लगे। प्रिया ने बुज़ुर्ग का सिर अपनी गोद में रखा और राहुल ज़ोर-ज़ोर से उनकी छाती दबाने लगा। शायद दिल का दौरा पड़ा है। "कोई एम्बुलेंस को फोन करो, जल्दी" प्रिया ने घबराते हुए कहा। बुज़ुर्ग ने रुकने का इशारा किया और जेब से बटुआ निकाला। बटुए में कुछ तुड़े-मुड़े से नोट, कुछ कागज़ और एक महिला की पासपोर्ट साइज़ तस्वीर। बूढ़े ने वो तस्वीर और एक मुड़ा हुआ पन्ना राहुल को पकड़ाया और अगले ही पल उसने दम तोड़ दिया। इतने में एम्बुलेंस भी आ गई और उस लाश को पोस्टमार्टम के लिए अस्पताल ले गई। राहुल ने पन्ना खोला। एक ख़त था। शायद कुछ दिन, कुछ महीने, या कुछ साल पुराना।

"*प्यारी शकुंतला,*

शायद यह ख़त तुम्हारे हाथों तक पहुँचे, शायद नहीं। शायद तुम इसे पढ़ो या शायद कूड़े में फेंक दो, पर आज, ज़िंदगी के इस आख़िरी पड़ाव पर खड़े होकर, मैं अपने अहम से नहीं, अपने दिल से लिख रहा हूँ। मौत के बाद जो सफर शुरू होता है उसमें मेरे साथी होंगे और वो सब पल जो मैंने तुम्हारे साथ हंसी-खुशी बिताए। थोड़े से प्यार भरे लम्हे, थोड़े से लता-रफ़ी के तराने, थोड़ी सी शिमला-मनाली की यादें और बहुत सारा अफ़सोस। अफ़सोस, मैंने तुम्हें जाने क्यों दिया? अफ़सोस कि मैने तुम्हे रोका क्यों नहीं? अफ़सोस कि सात जन्मों का वादा करके क्यूं सात साल में मैं तुमसे अलग हो गया? अफ़सोस कि उस दिन मेरे अहम ने मुझे अपनी गलती पता होते हुए भी कभी तुमसे माफी नहीं मांगने दी।

कई साल पहले जब मैं तुम से अलग हुआ था, तो मैंने कहा था– "मैं झुकूँगा नहीं।" मुझे लगा था कि झुकना हार है। आज समझ आया कि झुक जाना ही तो प्रेम था। तुम्हारी खामोशी मुझे कमज़ोरी लगती थी, तुम्हारा सब सह लेना मुझे आदत लगती थी। लेकिन मैं

भूल गया था कि हर चुप्पी में एक तूफ़ान होता है और हर सहनशीलता के पीछे एक टूटता हुआ इंसान। मैं जीत गया था उस दिन–बहस में, तर्क में, अपने अहंकार में, मगर हार गया था तुम्हें। मैं यह ख़त माफ़ी माँगने के लिए नहीं लिख रहा, क्योंकि कुछ माफ़ियाँ बहुत देर से कही जाती हैं, इतनी देर से कि माफ़ी मांगना ख़ुद में एक बेइमानी सा लगता है। मैं सिर्फ़ इतना कहने के लिए लिख रहा हूँ कि मैंने तुम्हें हमेशा प्यार किया, बस दिखाने का सलीका नहीं सीखा।

तुम्हारा,

अशोक"

राहुल की पलकों से आँसू टपक कर उस ख़त पर आ गिरे। प्रिया ने राहुल के हाथों से खत लिया और सारा पढ़ लिया। दोनों का हाल एक जैसा हो गया। व्हॉट्सएप और इंस्टाग्राम के इस युग में जन्मी आज की ये पीढ़ी शायद ही कभी समझ पाएगी वो आत्मीयता, जो खतों में जीवित हुआ करती थी। एक दूसरे से हमेशा के लिए अलग होने और फ़िर सारी ज़िन्दगी उस भार को ढोने से बेहतर है ना कि आज एक पल के लिए अपनी मैं को परे रख कर एक दूसरे को सॉरी कह दिया जाए।

"आई एम सॉरी" राहुल ने रोते हुए कहा।

प्रिया ने कुछ नहीं कहा। बस धीरे से राहुल के करीब आई, उसके सीने पर सिर रख दिया। "राहुल बनाम प्रिया" चपरासी ने कोर्ट रूम से बाहर आ कर तीन बार आवाज़ दी मगर अब वहां जवाब लेने वाला कोई भी नहीं था। “**उस दिन अदालत के कागजों पर कोई फैसला दर्ज नहीं हुआ, न किसी की जीत हुई, न किसी की हार। मगर असल में हार गया था अहंकार और जीत गया था प्यार”।**

श्री अभय गुप्ता,
लेखाकार

"क्यू.आर. (QR) कोड वाली चाय"

हमारे गाँव की मुख्य सड़क पर चाय की एक छोटी-सी की दुकान थी। वहां पर दिनभर किसान, रिक्शा वाले, विद्यार्थी और बुज़ुर्ग बैठते और चाय की चुस्कियों के साथ गपशप करते। दुकान के बाहर लाल रंग का पुराना टंगा बोर्ड आज भी मुझे अपने बीते बचपन याद दिलाता है ।

चाय वाले अंकल ने अपना पूरा जीवन चाय के गिलासों और उबलते पानी के बीच ही गुजार दिया। तड़के सुबह उठना, स्टोव जलाना, दूध उबालना और उसमें पत्ती डालते ही उसकी खुशबू चारों ओर फैल जाना ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि मानो सुबह के सूर्य की रक्ताभ किरणों के साथ कड़क और खुशबूदार चाय ने पूरे वातावरण को अपने वश में कर लिया हो। लेकिन इन सब के बावजूद चाय वाले अंकल की एक सबसे बड़ी समस्या थी -**"छुट्टे पैसे"**।

ग्राहक: "अरे चाय वाले अंकल, पंद्रह की चाय है, दस का नोट है... पाँच रुपये कल ले लेना ।"

चाय वाले अंकल: "भाई छुट्टा है नहीं, बकाया लिख लेता हूँ ।"

यह रोज़ का झंझट बन गया था। चूंकि उसकी दुकान पूरी तरह नकद पैसों पर चलती थी, इसलिए कई बार तो लोग उधार बोलकर बिना पैसे दिए चले जाते थे और जो बाद में कभी वापस

नहीं मिलता था और जो चाय वाले अंकल के लिए सिरदर्द बन चुका था।

- **पहला बदलाव**

चाय वाले अंकल का बेटा कॉलेज में पढ़ता था। वह अक्सर कहता-“पापा, अब लोग मोबाइल से पैसे देते हैं। आपको भी दुकान पर क्यूआर कोड लगवाना चाहिए।”

चाय वाले अंकल हँस कर टाल देते थे-“अरे बेटा, ये सब शहरों में चलता है। गाँव में कौन मोबाइल से चाय खरीदेगा?” लेकिन मन ही मन वह डरता भी था। उसे बैंक और मोबाइल की भाषा समझ नहीं आती थी। उसे लगता था कि अगर मोबाइल से पैसे आए तो शायद खो जाए या खाते तक पहुँचे ही नहीं।

- **जागरूक ग्राहक**

एक दिन कॉलेज के कुछ लड़के दुकान पर आए । उन्होंने चाय पी और पूछा -

“अंकल, पे.टी.एम. है? गूगल-पे है?” चाय वाले अंकल हक्का-बक्का रह गए। उन्होंने सिर हिलाते हुए कहा- **“नहीं बेटा, सिर्फ़ नकद चलता है।”** लड़के एक-दूसरे को देखकर मुस्कराएँ और बोले- “**अरे अंकल, आप भी डिजिटल हो जाइए, नहीं तो ग्राहक भाग जाएंगे।**”

चाय वाले अंकल ने उनकी हँसी में ताना सा महसूस किया। पहली बार उसे लगा कि वक़्त बदल रहा है और अगर वह वक़्त के साथ नहीं बदले तो पीछे छूट जाएंगे।

- **चाय वाले अंकल के बेटे की पहल -** उस रात चाय वाले अंकल ने बेटे से कहा - “बेटा, वो **क्यू.आर.** कोड वाला सिस्टम तू समझा दे, पर देखना, मेरे पैसे कहीं डूब न जाएँ।” बेटे ने धैर्य से समझाया - “पापा, हर पेमेंट का मैसेज तुरंत आएगा, बैंक में पैसा सुरक्षित रहेगा और कोई उधारी भी नहीं रहेगी।” अगले दिन चाय वाले अंकल के बेटे

ने बैंक जाकर चाय वाले अंकल का खाता एक्टिव करवाया और दुकान पर एक नीले-सफेद रंग का क्यू.आर. कोड चिपका दिया। चाय वाले अंकल घबराए हुए थे। उन्हें लगता था जैसे दुकान में कोई नई मशीन आ गई हो।

- **पहला पिंग**

शाम को एक युवक चाय पीने आया। उसने मोबाइल निकाला और क्यूआर कोड स्कैन किया। चाय वाले अंकल घबराकर बेटे की ओर देखने लगे। अचानक मोबाइल में "ट्रिंग" की आवाज़ आई और स्क्रीन पर मैसेज चमका -**"₹15 रिसिव्ड फ्रॉम रोहित वाया यूपीआई।"** चाय वाले अंकल ने कांपते हाथों से मोबाइल देखा। उनकी आँखों में चमक आ गई थी। "अरे वाह बेटा, पैसे आ भी गए ! बैंक में भी पहुँच गए?" बेटा मुस्कराकर बोला - "हाँ पापा, अब यही नया जमाना है। "चाय वाले अंकल की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उन्हें लगा जैसे कोई भारी बोझ उनके सर से उतर गया हो।

- **पूरे गाँव में चर्चा:** धीरे-धीरे यह खबर पूरे गाँव में फैल गई - "अरे, अब चाय वाले की दुकान पर भी मोबाइल से चाय मिलती है।" लोग उत्सुक होकर आने लगे। किसान, जो पहले छुट्टे पैसे न होने पर झगड़ते थे, अब मोबाइल निकालकर तुरंत पेमेंट करने लगे।

यहाँ तक कि पास की किराने की दुकान वाले अंकल, जो हमेशा चाय वाले अंकल का मज़ाक उड़ाते थे, खुद एक दिन आकर बोले - **"भाई, मुझे भी ये कोड लगवाना है।"** चाय वाले अंकल मुस्कराए बिना नहीं रह सके।

- **गर्व का पल**

एक दिन गाँव में शहर से आए कुछ विदेशी पर्यटक रुके । उन्होंने चाय पी और कहा - **"क्यू.आर. कोड ?"** चाय वाले अंकल ने गर्व से दीवार की ओर इशारा किया । उन्होंने तुरंत स्कैन करके पेमेंट

किया। मोबाइल पर फिर वही "ट्रिंग" की आवाज़ आई। चाय वाले अंकल ने जैसे ही स्क्रीन पर मैसेज देखा, उनका सीना चौड़ा हो गया। उन्होंने धीरे से कहा - **"अब मेरी चाय सिर्फ़ दूध और पत्ती से नहीं, डिजिटल इंडिया की मिठास से भी बनी है।"**

- **नई सोच**

कुछ ही महीनों में चाय वाले अंकल का कारोबार बढ़ गया। अब उनके पास पहले की तरह उधार का झंझट नहीं था। गाँव के दूसरे लोग भी उनसे प्रेरित होकर डिजिटल पेमेंट अपनाने लगे। चाय वाले अंकल के बेटे ने मोबाइल पर एक ऐप दिखाते हुए कहा - "देखिए पापा, **आज आपने 200 ग्राहकों से पेमेंट लिया।** हर हिसाब साफ़ और तुरंत।" चाय वाले अंकल ने बेटे को गले लगा लिया। उनकी आँखों में खुशी के आँसू थे। "बेटा, मैं सोच भी नहीं सकता था कि एक दिन मोबाइल से चाय बिकेगी। लेकिन तुमने मुझे समय के साथ चलना सिखा दिया।"

- **अंत**

अब चाय वाले अंकल की दुकान गाँव का डिजिटल सेंटर बन चुकी थी। लोग सिर्फ़ चाय पीने ही नहीं, बल्कि यह देखने भी आने लगे कि कैसे एक साधारण चाय वाला भी नए जमाने को गले लगा सकता है। उनके लिए हर "ट्रिंग" की आवाज़ केवल पैसे आने का संकेत नहीं थी। वह आवाज़ उनके आत्मविश्वास, उनके बेटे की मेहनत एवं उस बदलते भारत की थी जो गाँव-गाँव तक पहुँच चुका था।

चाय वाले अंकल अक्सर ग्राहकों से कहते - "देखो भाई, ज़माना बदल रहा है। नकद अच्छा है, पर डिजिटल से हिसाब साफ़ रहता है। अब मेरी दुकान पर सिर्फ़ चाय ही नहीं, बल्कि भविष्य भी बिकता है।" अब दुकान के बाहर टंगे बोर्ड पर एक नई लाइन लिखी थी - **"यहाँ चाय और क्यू.आर. दोनों मिलते हैं।**

श्री अश्विनी,
सहायक लेखा अधिकारी

"काश फिर बचपन लौट आए"

बिन कारण हँसना, बिन बात के रो जाना,
मिट्टी में खेल के आसमान छू जाना।
कागज़ की नाव ले के बारिश में घूम जाना,
छोटे से खिलौने में पूरी दुनिया बस जाना।

ना किताबों का बोझ, ना कल की कोई चिंता,
बस खेल, कहानी और माँ की ममता।
पिता की डांट में भी प्यार छुपा होता है,
हर छोटा सा पल त्यौहार-सा लगता है।

आज बड़ा होकर समझ आया,
वो मासूम दुनिया कितनी प्यारी थी।
जिम्मेदारियों ने बचपन छीन लिया,
पर यादें, आज भी दिल में भारी थी।

काश टाइम उल्टा चल पाए,
और बचपन फिर से लौट आए...

सुश्री आरती वार्ष्णेय,
लेखाकार

"मथुरा: कृष्ण नगरी"

जब मन शांति खोजता है और हृदय भक्ति से भरना चाहता है, तब स्मरण आता है मथुरा - एक ऐसा नगर जहाँ हर गली, हर कण और हर श्वास में भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं की गूँज सुनाई देती है। ब्रज क्षेत्र का हृदय माना जाने वाला मथुरा जो उत्तर प्रदेश में स्थित केवल एक शहर ही नहीं, बल्कि आस्था, प्रेम और आध्यात्मिक अनुभूति का जीवंत केंद्र है। चूंकि मैं स्वयं ब्रज क्षेत्र से आती हूँ, इसलिए मथुरा के बारे में मुझे काफ़ी जानकारी है, जिसे मैं यहाँ साझा करना चाहती हूँ।

मथुरा वह पावन स्थान है जहाँ भगवान श्रीकृष्ण ने कंस का वध कर बुराई पर अच्छाई की विजय को सिद्ध किया। मथुरा ज़िले में ही वृंदावन, गोकुल और बरसाना जैसे प्रसिद्ध धार्मिक स्थल स्थित हैं। गोकुल वह स्थान है जहाँ भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी बाल लीलाएँ दिखाई थीं। यही वह स्थान है जहाँ वे अपने मित्रों के साथ माखन चोरी किया करते थे और गोपियों के साथ हँसी-ठिठोली करते थे।

वृंदावन की कुंज गलियों में स्थित बाँके बिहारी मंदिर अत्यंत प्रसिद्ध है। यहाँ की लस्सी और पेड़े भी बहुत प्रसिद्ध हैं। बाँके बिहारी का मंदिर ऐसा मंदिर है जहाँ हमेशा भीड़ रहती है, चाहे कोई पर्व हो या न हो। यहाँ दर्शन भीड़ और धक्कों के साथ होते हैं, परंतु भगवान

श्री कृष्ण का मनमोहक स्वरूप व अद्‌भुत छटा सभी कष्ट भुला देता है। यहाँ हर दो मिनट में भगवान को पर्दा किया जाता है क्योंकि मान्यता है कि यदि कोई भक्त सच्चे मन से दो मिनट से अधिक समय तक भगवान की आँखों में देखता है, तो भगवान श्री कृष्ण स्वयं उसके साथ चलने लगते हैं। इसी मंदिर के पास राधा वल्लभ मंदिर भी स्थित है।

वृंदावन में वैष्णो माता का मंदिर है, जिसमें माता वैष्णो देवी की विशाल मूर्ति स्थापित है तथा एक गुफा भी बनी हुई है। इसके साथ ही वृंदावन में प्रसिद्‌ध प्रेम मंदिर स्थित है, जिसका भव्य स्वरूप मन मोह लेता है। यहाँ श्रीकृष्ण के बचपन से लेकर युवावस्था तक की कथाएँ मूर्तियों के माध्यम से दर्शाई गई हैं। मंदिर की बनावट ताजमहल जैसी सुंदर है और प्रतिदिन रात्रि 7 बजे यहाँ भव्य लाइट शो होता है।

वृंदावन में वनों में अनुपम निधि वन भी स्थित है। कहा जाता है कि यहाँ रात्रि में भगवान श्रीकृष्ण गोपियों के साथ रासलीला करते हैं। मान्यता है कि निधि वन के पेड़ रात होते ही श्री कृष्ण और हज़ारों गोपियों में परिवर्तित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त वृंदावन में इस्कॉन मंदिर और राधा वल्लभ मंदिर भी प्रसिद्‌ध हैं।

मथुरा में भगवान श्री कृष्ण का जन्म स्थान स्थित है, जो अत्यंत भव्य है। यहाँ कंस द्‌वारा बनवाई गई वह जेल भी है, जहाँ माता देवकी ने अपने आठ वें पुत्र भगवान श्रीकृष्ण को जन्म दिया था। मथुरा से कुछ दूरी पर गोकुल स्थित है, जहाँ भगवान श्रीकृष्ण बाल रूप में विराजमान हैं। यहाँ मंदिर के गर्भगृह में घुटनों के बल चलकर जाने की परंपरा है। गोकुल के पास ही रमन रेती है, जहाँ की रेत शरीर से बिल्कुल भी नहीं चिपकती। श्रद्‌धालु यहाँ आकर रेत में

खेलते हैं। इस मंदिर में आरती एक हाथी द्वारा की जाती है तथा इसके सामने एक हिरण पार्क भी है।

मथुरा से लगभग 42 किलोमीटर दूर बरसाना में लाड़ली (राधा रानी) जी का मंदिर स्थित है। ब्रज क्षेत्र में मान्यता है कि यदि राधा रानी को प्रसन्न कर लिया जाए, तो श्री कृष्ण स्वयं ही प्रसन्न हो जाते हैं। इस मंदिर तक पहुँचने के लिए लगभग 250 सीढ़ियाँ हैं तथा उड़न खटोला की सुविधा भी उपलब्ध है।

मथुरा से लगभग 22 किलोमीटर दूर गोवर्धन पर्वत स्थित है, जहाँ हज़ारों श्रद्धालु परिक्रमा के लिए आते हैं। यह वही पर्वत है जिसे भगवान श्री कृष्ण ने अपनी छोटी उँगली पर उठाकर इंद्र देव के प्रकोप से ब्रज वासियों की रक्षा की थी। यहाँ छोटी और बड़ी–दो प्रकार की परिक्रमा की जाती है तथा अनेक भक्त दंडवत परिक्रमा भी करते हैं।

मथुरा-वृंदावन की होली पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। यहाँ होली केवल रंगों का त्योहार ही नहीं, बल्कि भक्ति और प्रेम का उत्सव भी माना जाता है। बरसाना की लठमार होली, वृंदावन की फूलों की होली और मथुरा की रंगों वाली होली श्रद्धालुओं को विशेष रूप से आकर्षित करती है। इस अवसर पर लोग रंग-गुलाल के साथ भजन-कीर्तन में डूब जाते हैं और पूरा ब्रज क्षेत्र राधा-कृष्ण के प्रेम और आनंद से भर उठता है।

अंततः कहा जा सकता है कि मथुरा और ब्रज क्षेत्र केवल एक धार्मिक स्थान नहीं, बल्कि आस्था, प्रेम और संस्कृति की जीवंत भूमि भी है। यहाँ की गलियों में भक्ति बसती है, मंदिरों में श्रद्धा और त्यौहारों में जीवन का उल्लास दिखाई देता है।

श्री गोपाल लाल मीना,
वरिष्ठ उप महालेखाकार
(शाखा कार्यालय, अहमदाबाद)

“राजभाषा नीति: उपलब्धियाँ और चुनौतियाँ”

भारत भाषाई विविधता वाला देश है, जहाँ सैकड़ों भाषाएँ और बोलियाँ बोली जाती हैं। ऐसे बहुभाषी राष्ट्र में प्रशासनिक कार्यों के लिए एक समन्वयकारी भाषा की आवश्यकता स्वाभाविक थी। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए हिंदी को देवनागरी लिपि में संघ की राजभाषा का दर्जा दिया गया। भारतीय संविधान के भाग XVII (अनुच्छेद 343 से 351) में राजभाषा संबंधी प्रावधान किए गए हैं। राजभाषा नीति का उद्देश्य न केवल प्रशासनिक कार्यों में हिंदी का प्रयोग बढ़ाना है, बल्कि भारतीय भाषाओं के समन्वित विकास को भी सुनिश्चित करना भी है।

राजभाषा नीति की प्रमुख उपलब्धियाँ

1. प्रशासन में हिंदी का बढ़ता प्रयोग:- स्वतंत्रता के बाद से केंद्र सरकार के मंत्रालयों, विभागों और सार्वजनिक उपक्रमों में हिंदी के प्रयोग में निरंतर वृद्धि हुई है। नोटिंग, ड्राफ्टिंग, पत्राचार, रिपोर्ट, आदेश और अधिसूचनाएँ अब बड़ी मात्रा में हिंदी में तैयार की जा रही हैं। राजभाषा अधिनियम 1963 तथा उसके नियमों के माध्यम से हिंदी के प्रयोग को संस्थागत रूप मिला।

2. हिंदी प्रशिक्षण की व्यवस्था:- केंद्र सरकार के लिपिक व आशुलिपिक संवर्ग में भर्ती होने वाले कर्मचारियों के लिए हिंदी टाइपिंग और आशुलिपि का प्रशिक्षण अनिवार्य रूप से उपलब्ध कराया गया। इससे गैर-हिंदी भाषी कर्मचारियों में भी हिंदी के प्रयोग की क्षमता विकसित हुई। देश भर में राजभाषा प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए गए, जिससे प्रशासनिक कार्यों में भाषा संबंधी बाधाएँ कम हुईं।

3. तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्रों में हिंदी का विकास:- विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विधि, प्रशासन और वाणिज्य जैसे क्षेत्रों के लिए हिंदी शब्दावली का निर्माण किया गया। आयोगों और समितियों ने तकनीकी शब्दों का मानकीकरण किया, जिससे हिंदी में उच्च स्तरीय कार्य संभव हो सका। कंप्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी में भी हिंदी सॉफ्टवेयर, यूनिकोड और डिजिटल प्लेटफॉर्म के कारण हिंदी का प्रयोग तेजी से बढ़ा है।

4. अनुवाद व्यवस्था का सुदृढ़ीकरण:- केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो तथा विभिन्न विभागों के राजभाषा प्रकोष्ठों ने अंग्रेजी से हिंदी तथा हिंदी से अंग्रेजी अनुवाद की प्रभावी व्यवस्था विकसित की। इससे द्विभाषिक प्रशासन को गति मिली और आम जनता के लिए सरकारी जानकारी अधिक सुलभ हुई।

5. जनसंपर्क और जागरूकता कार्यक्रम:- हिंदी दिवस, हिंदी सप्ताह और हिंदी पखवाड़ा जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से कर्मचारियों तथा जनता में हिंदी के प्रति रुचि और जागरूकता बढ़ी। पुरस्कार योजनाओं और प्रतियोगिताओं ने भी हिंदी के प्रयोग को प्रोत्साहन दिया।

6. भारतीय भाषाओं के समन्वय में भूमिका:- राजभाषा नीति ने हिंदी को अन्य भारतीय भाषाओं के विरोध में नहीं, बल्कि उनके बीच संपर्क भाषा के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। हिंदी ने विभिन्न भाषाई क्षेत्रों के लोगों के बीच संवाद को सरल बनाया।

राजभाषा नीति की प्रमुख चुनौतियाँ

1. अंग्रेजी का प्रभुत्व:- भारत में शिक्षा, न्यायपालिका, विज्ञान, व्यापार और उच्च प्रशासन में अंग्रेजी का प्रभाव अभी भी बहुत मजबूत है। उच्च स्तर के निर्णय और तकनीकी दस्तावेज प्रायः अंग्रेजी में ही तैयार होते हैं। इससे हिंदी को पूर्ण राजकीय कार्य भाषा के रूप में स्थापित करने में कठिनाई आती है।

2.गैर-हिंदी भाषी राज्यों की आशंकाएँ: - कुछ राज्यों में यह धारणा है कि हिंदी को बढ़ावा देने से उनकी मातृभाषाओं की उपेक्षा हो सकती है। इसलिए राजभाषा नीति को लागू करते समय संतुलन और संवेदनशीलता आवश्यक है, ताकि भाषाई विविधता सुरक्षित रहे।

3. तकनीकी शब्दावली की जटिलता: - हालाँकि तकनीकी शब्द बनाए गए हैं, परंतु कई बार वे अत्यधिक संस्कृतनिष्ठ या कठिन होते हैं, जिससे सामान्य उपयोग में बाधा आती है। सरल और प्रचलित शब्दों के प्रयोग की आवश्यकता महसूस की जाती है।

4.व्यवहारिक प्रयोग में कमी: - कई कार्यालयों में नियमों के अनुसार हिंदी का प्रयोग दिखावटी रूप से होता है, परंतु वास्तविक कार्य अंग्रेजी में ही किया जाता है। फाइलों की नोटिंग या ई-मेल में अंग्रेजी की प्रधानता बनी रहती है।

5. डिजिटल युग की नई चुनौतियाँ: - सूचना प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और वैश्विक संचार के क्षेत्र में अंग्रेजी का वर्चस्व अधिक है। हिंदी में गुणवत्तापूर्ण डिजिटल सामग्री, तकनीकी संसाधन और शोध अभी अपेक्षाकृत कम हैं, जिन्हें बढ़ाने की आवश्यकता है।

6. प्रशिक्षण के बाद भी झिझक:- कई कर्मचारी हिंदी जानते हुए भी अंग्रेजी में कार्य करना अधिक सुरक्षित या प्रतिष्ठित समझते हैं। यह मानसिकता भी हिंदी के व्यापक प्रयोग में बाधा बनती है।

7. समाधान और आगे की दिशा: - राजभाषा नीति को सफल बनाने के लिए दंडात्मक उपायों से अधिक प्रोत्साहन और सुविधा आधारित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। सरल हिंदी का प्रयोग, आधुनिक तकनीक का उपयोग, अनुवाद की गुणवत्ता में सुधार, और भारतीय भाषाओं के साथ संतुलित विकास–ये सभी आवश्यक कदम हैं। शिक्षा प्रणाली में भी मातृभाषा और हिंदी को मजबूत आधार दिया जाना चाहिए, ताकि आने वाली पीढ़ियाँ स्वाभाविक रूप से हिंदी में दक्ष हों।

निष्कर्ष

राजभाषा नीति ने स्वतंत्र भारत में हिंदी को प्रशासनिक और संपर्क भाषा के रूप में स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अनेक उपलब्धियों के बावजूद अभी भी कई व्यावहारिक और मानसिक चुनौतियाँ मौजूद हैं। यदि हिंदी को सरल, समावेशी और आधुनिक रूप में अपनाया जाए तथा अन्य भारतीय भाषाओं के सम्मान के साथ उसका विकास किया जाए, तो राजभाषा नीति अपने वास्तविक उद्देश्य–राष्ट्रीय एकता और प्रशासनिक सुगमता–को पूर्ण रूप से प्राप्त कर सकती है।

श्री चंचल कटारा,
सहायक लेखा अधिकारी

“उज्ज्वल किरणें”

अपनी दिवाली की छुट्टियों के खत्म होने के बाद, पूजा और मैं 26 अक्टूबर 2025 को सुबह 3 बजे ट्रेन से राजकोट के लिए रवाना हुए। ट्रेन में जैसे ही मैं सो कर उठा, तो एक संदेश देखा। संदेश में एक लिंक था; जब मैंने लिंक खोला, तो न्यूज 18 का एक पेज सामने आया, जिसकी हेडलाइन थी "110 किमी/घंटा की रफ्तार से तबाही आ रही है, बंगाल की खाड़ी में तूफान।" इस खबर को पढ़कर मेरा चेहरा डर से पीला हो गया। यह खबर स्पष्ट कारणों से विनाशकारी थी, "यह एक भयानक चक्रवात है।" लेकिन एक व्यक्तिगत कारण भी था, कि 28 अक्टूबर को हमने अंडमान द्वीप समूह के लिए अपनी एल.टी.सी. यात्रा की योजना बनाई थी।

दो महीने की योजना, ₹50,000 की उड़ान टिकटें, और होटल व फेरी बुकिंग में अन्य ₹50,000 सब कुछ समुद्र में डूबता हुआ नज़र आ रहा था। मैंने आगे पढ़ा और पाया कि चक्रवात 25 तारीख को अंडमान से गुजर चुका था और अब आंध्र प्रदेश की ओर बढ़ रहा था। एक पल के लिए मुझे राहत मिली और खुशी हुई कि चक्रवात अंडमान से गुजर गया था, लेकिन एक मिनट बाद यह मिश्रित भावनाओं में बदल गया क्योंकि यह भारत की मुख्य भूमि की ओर बढ़ रहा था। लेकिन, अंत में, सब कुछ ठीक होने की उम्मीद में, मैंने

पूजा को इसके बारे में बताया और कहा, "निपट लेंगे" ऐसा कहना साहसिक लगा, लेकिन यात्रा से ठीक एक या दो दिन पहले ये सब रद्द करने के अलावा कोई विकल्प भी नहीं था।

27 अक्टूबर को रात के करीब 9:30 बजे थे अचानक, पूजा ने मुझे बताया कि वह अपना आधार कार्ड अपने गृह-नगर में भूल गई है। मैंने उससे कहा कि हम इसे सुबह एक जेरोक्स की दुकान से ले लेंगे। 28 अक्टूबर को, हम जेरोक्स की दुकान पर गए और आधार कार्ड ले लिया। हमने अपने टिकट के प्रिंटआउट और आईडी की जाँच की। बाद में, हम अपना सामान अपने दो सूटकेस और एक हैंडबैग लेकर राजकोट रेलवे जंक्शन के लिए निकल पड़े।

हम जंक्शन पर मोहित और उसकी पत्नी निष्ठा से मिले। मैंने मोहित को डिजी यात्रा ऐप डाउनलोड करने का सुझाव दिया, जो हमारे आधार से प्रमाणित था, ताकि हमें हवाई अड्डे में प्रवेश करते समय और सुरक्षा जाँच के दौरान लाइन में इंतजार न करना पड़े। जब मैं अपने बोर्डिंग पास अपलोड कर रहा था, पूजा का बोर्डिंग पास अपलोड नहीं हुआ, और उसमें दिखाया गया कि बोर्डिंग पास पर नाम आधार कार्ड पर नाम से मेल नहीं खाता है। इसलिए, मैंने अपने बोर्डिंग पास और आधार कार्ड निकाले और जब मैंने उनकी जाँच की तो देखा कि उसके बोर्डिंग पास में 'पूजा बोरा' लिखा था; बोरा शादी से पहले उसका सरनेम था, जबकि आधार कार्ड पर 'पूजा कटारा' लिखा था। मैंने टिकट बुक करते समय सरनेम पर ध्यान नहीं दिया, और उसके पास अपनी कोई पुरानी आईडी भी नहीं थी। अब क्या करें? मोहित से इंडिगो हेल्पलाइन पर कॉल करने और पूछने के लिए कहा कि क्या कुछ किया जा सकता है? मैंने मेरे पिताजी को फोन

किया, उन्हें सब कुछ बताया। उन्होंने कहा कि 'वह कार्यालय में हैं, और इस समय बारिश हो रही है, वह बाद में घर जाकर देखेंगे कि क्या करना है।'

भले ही इसका नाम 'इंडिगो हेल्पलाइन' है, लेकिन उनसे मदद की उम्मीद बिल्कुल न करें। उन्होंने सीधे कहा कि उन्हें खेद है कि वे नाम नहीं बदल सकते हैं और चूंकि सरनेम अलग है, सिस्टम उन्हें दो अलग-अलग व्यक्ति मानता है। इसलिए, उन्होंने तुरंत टिकट रद्द करने की सलाह दी क्योंकि बोर्डिंग के समय में 3 घंटे से अधिक का समय था, चेतावनी दी कि अगर हमने और इंतजार किया, तो हम उड़ान रद्द भी नहीं कर पाएँगे। हेल्पलाइन पर 3-4 बार कॉल करने, उन्हें यह बताने कि भले ही सरनेम अलग है, पर आधार नंबर तो एक ही है और जो दो अलग-अलग व्यक्तियों के लिए एक नहीं हो सकता, उन्होंने कहा कि वे समीक्षा करेंगे और हमसे संपर्क करेंगे, जो उन्होंने वैसे भी नहीं किया।

15 मिनट बाद मेरे पिताजी ने फोन किया और कहा कि तुम्हारी माँ को पूजा का पुराना आधार कार्ड, जिसमें सरनेम बोरा था, मिल गया है और मैं तुम्हें देने अहमदाबाद आ रहा हूँ। उस वक्त समय दोपहर 03:21 बजे का था। मेरा गृह-नगर ट्रैफिक और अनिश्चितताओं के अधीन लगभग 4-6 घंटे की दूरी पर था और मेरे बोर्डिंग का समय रात 08:50 का था, अब यह समय के खिलाफ एक दौड़ थी।

हम करीब 7:30 बजे हवाई अड्डे पहुँचे और एक घंटे तक इंतजार किया। पिताजी अपनी कार में पहुँचे। उन्हें हमारी तरफ आते देख हमारी जान में जान आई। वह हमारे पास आए, हमें आधार कार्ड

दिया, एक या दो मिनट बात की, हमें सुरक्षित रहने के लिए कहा, आशीर्वाद दिया और हमें अंदर जाने के लिए कहा। हमने अपने टिकट और आईडी दिखाए और बिना किसी समस्या के प्रस्थान स्थल में चले गए। पिताजी को कांच की दीवार से मुड़कर जाते हुए देख, हम दोनों की आँखें नम होने लगीं। पूजा की आँखो से आँसू आने लगे। इतने समय तक उसने अपने आँसू रोक रखे थे, वही मुझे एक उपलब्धि जैसा लगा। मैंने उसे गले लगाया और बस उसके साथ चुपचाप खड़ा रहा। मैं जानता था कि कोई भी शब्द उस पल के लिए पर्याप्त नहीं होगा।

मोहित और निष्ठा भाभी पहले ही सुरक्षा जांच की ओर बढ़ चुके थे, इसलिए हम भी वहां जल्दी पहुंचे। हमने औपचारिकताएं पूरी कीं, विमान में सवार हुए और हैदराबाद हवाई अड्डे पर उतर गए। वहां बारिश हो रही थी। हमारी वहां छह घंटे की लंबी प्रतीक्षा थी रात 11:30 बजे से सुबह 5:30 बजे तक। हालांकि, हम इसके लिए तैयार थे, क्योंकि मैंने पहले ही हवाई अड्डे का लाउंज बुक कर लिया था। हमने सुरक्षा गार्ड से दिशाएं पूछीं और लगभग 12:50 बजे वहां पहुंचे। आज के दिन के उतार-चढ़ावों ने शायद पूजा पर काफी असर डाला था, वह इतनी गहरी नींद में थीं कि जब मैं 2 घंटे बाद अपने लाउंज पास रिन्यू कराने गया, तो उन्हें पता भी नहीं चला।

मैंने उन्हें सुबह 4:30 बजे उठाया, और हम फूड कोर्ट की ओर गए। हमने नाश्ता किया और प्रस्थान गेट की ओर बढ़ गए। बाहर आसमान में अंधेरा छाया हुआ था, जो हमारे सिर के ऊपर मंडरा रहा था और लगातार रात भर बारिश भी हो रही थी, मानो 'इंद्र देव' का प्रकोप हों। हम विमान में सवार हुए, अपनी सीटों पर बैठे

और सोने की उम्मीद में अपनी आँखें बंद कर लीं। एक घंटे बाद, फ्लाइट अटेंडेंट ने हमें धीरे से जगाया वह हमारा प्री-बुक्ड खाना लेकर आई थी, लेकिन हमारा पेट भरा हुआ था और कुछ भी खाने की हिम्मत नहीं थी। तभी हमने खिड़की के बाहर देखा, जहाँ एक अद्भुत नज़ारा हमारा इंतज़ार कर रहा था। हम बादलों को चीरकर ऊपर आ चुके थे, जहाँ आसमान बिल्कुल साफ था और सूरज अपने भव्य रूप में चमक रहा था। सूरज की किरणों वाला नजारा उस अंधेरे और बारिश के बिल्कुल विपरीत था जिसे हम पीछे छोड़ आए थे।

अब जब मैं इसके बारे में सोचता हूँ, तो वे उज्ज्वल किरणें हमारी खोई हुई किस्मत की वापसी जैसी लगती हैं। उस रोशनी ने हमारे अगले सात दिनों के लिए एक शानदार आधार तैयार कर दिया था, जो अंडमान में बिताए गए हमारे जीवन के सबसे लुभावने और यादगार दिनों में से एक था।

हिंदी पखवाड़ा-2025 का छायाचित्र

श्री दर्शन सिंह तंवर,
लिपिक

"अहमदाबाद: गुजरात का धड़कता हुआ हृदय"

साबरमती नदी के तट पर बसा अहमदाबाद न केवल गुजरात का सबसे बड़ा शहर है, बल्कि यह भारत के सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक और सांस्कृतिक केंद्रों में से एक भी है। सन 1411 में सुल्तान अहमद शाह द्वारा स्थापित यह शहर प्राचीन परंपराओं और आधुनिक प्रगति का एक अनूठा संगम है। इसे 'भारत का मैनचेस्टर' और 'पूर्व का ऐथेंस' जैसे नामों से भी जाना जाता है।

अहमदाबाद का इतिहास अत्यंत गौरवशाली रहा है। **मध्यकाल में यह मुज़फ्फ़रिद वंश की राजधानी था। यूनेस्को ने इसकी अनूठी वास्तुकला और ऐतिहासिक महत्व के कारण इसे भारत का पहला विश्व विरासत शहर (UNESCO World Heritage City) घोषित किया है।** शहर की 'पोल' (तंग गलियों वाले आवासीय क्षेत्र) यहाँ की सामुदायिक जीवन शैली का जीवंत उदाहरण हैं।

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में अहमदाबाद की भूमिका अतुलनीय है। **महात्मा गांधी ने यहाँ साबरमती आश्रम की स्थापना की, जो कई वर्षों तक भारतीय राजनीति का केंद्र रहा। सन 1930 की प्रसिद्ध 'दांडी यात्रा' की शुरुआत यहीं से हुई थी, जिसने ब्रिटिश साम्राज्य की नींव हिला दी थी।**

अहमदाबाद ने खुद को भारत के अग्रणी शिक्षा केंद्र के रूप में स्थापित किया है। भारतीय प्रबंधन संस्थान भारत का सबसे पुराना और प्रमुख प्रबंधन संस्थान है, जो वैश्विक स्तर पर ख्याति प्राप्त है।

अहमदाबाद यूनिवर्सिटी:- यह एक निजी अनुसंधान विश्वविद्यालय है जो अंतःविषय शिक्षण पर केंद्रित है।
अन्य प्रमुख संस्थान:- यहाँ गुजरात विद्यापीठ (गांधी जी द्वारा स्थापित), सीईपीटी (CEPT) यूनिवर्सिटी, निरमा विश्वविद्यालय, और एल.डी. कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग जैसे संस्थान हैं, जो छात्रों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान कर रहे हैं।

2026 तक अहमदाबाद भारत के सबसे आधुनिक शहरों में से एक बनने की राह पर है। यहाँ कई महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचे संबंधी परियोजनाएं चल रही हैं: **जैसे मुंबई-अहमदाबाद बुलेट ट्रेन: भारत की पहली हाई-स्पीड रेल कॉरिडोर का पहला खंड 2026 तक चालू होने की उम्मीद है। यह ट्रेन 320 किमी प्रति घंटे की रफ्तार से चलेगी, जिससे मुंबई और अहमदाबाद के बीच की यात्रा का समय घटकर मात्र 2-3 घंटे रह जाएगा।**

गिफ्ट सिटी (GIFT City):- यह भारत का पहला ग्रीन फील्ड स्मार्ट सिटी और अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय सेवा केंद्र है, जो गांधीनगर-अहमदाबाद कॉरिडोर में स्थित है। यहाँ 20 से अधिक अंतर्राष्ट्रीय बैंकिंग संस्थान और बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ कार्यरत हैं।

धोलेरा स्मार्ट सिटी:- यह अहमदाबाद से लगभग 80 किमी दूर विकसित की जा रही एक विशाल औद्योगिक टाउनशिप है, जिसे "विश्व स्तरीय" बुनियादी ढांचे के साथ बनाया जा रहा है।

साबरमती आश्रम, अडालज की बावड़ी, कांकरिया झील ,अहमदाबाद हेरिटेज वॉक, सिदी सैयद की जाली जामा मस्जिद और साबरमती रिवरफ्रंट इस शहर को चार चाँद लगाती है। यहाँ के त्यौहार, विशेष रूप से नवरात्रि और उत्तरायण (पतंग बाजी का त्यौहार), शहर की जीवंत ऊर्जा को प्रदर्शित करते हैं।

अहमदाबाद नगर निगम (AMC) शहर की सुविधाओं और विकास की देख-रेख करता है। अहमदाबाद का खान-पान पूरी दुनिया में अपनी अलग पहचान रखता है। ढोकला, फाफड़ा, जलेबी और खमण यहाँ के प्रसिद्ध व्यंजन हैं। 'मानेक चौक' रात के समय एक विशाल फूड मार्केट में बदल जाता है, जहाँ शहर की असली रौनक देखने को मिलती है। यहाँ के लोग अपनी उद्यमिता और अतिथि सत्कार के लिए जाने जाते हैं।

अहमदाबाद एक ऐसा शहर है जो अपनी जड़ों से जुड़ा हुआ है और साथ ही आसमान छूने के सपने देखता है। यह शहर साबरमती की शांति और आधुनिक भारत की गतिशीलता का प्रतीक है। विकास और विरासत के बीच जो संतुलन यहाँ देखने को मिलता है, वह विरला है।

श्री नरेन्द्र प्रताप,
सहायक लेखा अधिकारी

"मेरा सफर: जब दुनिया घूमना रुक गई"

छह साल पहले की बात है। मेरी दुनिया बिल्कुल सामान्य थी। फिर एक सुबह सब कुछ बदल गया। जैसे ही मैं सो कर उठा, मुझे लगा जैसे मेरा कमरा किसी तेज झूले की तरह गोल-गोल घूम रहा है। मुझे लगा कि शायद यह कमजोरी है, लेकिन जब मैं फर्श पर गिरा, तब मुझे समझ आया कि समस्या गहरी है। डॉक्टरों ने बताया कि मुझे **वेस्टिबुलर डिस्फंक्शन (Vestibular Dysfunction) है। साधारण शब्दों में कहें तो कह सकते हैं कि यह मेरे कान के अंदर का 'बैलेंस सिस्टम' और मेरा दिमाग एक-दूसरे से अलग भाषा में बात कर रहे थे, के जैसा था।**

अंधेरी गलियों जैसा अनुभव:- शुरुआती दिन बहुत डरावने थे। मुझे घर के अंदर चलने में भी डर लगता था। बाहर निकलना, सीढ़ियाँ चढ़ना, या यहाँ तक कि गर्दन घुमाकर किसी से बात करना भी एक पहाड़ जैसा काम बन गया था। मुझे लगा कि शायद अब मुझे अपनी पूरी जिंदगी दवाओं और इसी 'धुंध' और 'चक्कर' के साथ बितानी होगी। तभी मेरी मुलाकात एक फिजियोथेरेपिस्ट से हुई, जिन्होंने मुझे वेस्टिबुलर रिहेबिलिटेशन (VRT) के बारे में बताया। **वेस्टिबुलर सिस्टम हमारे आंतरिक कान (Inner Ear) में स्थित होता है और मस्तिष्क को शरीर की स्थिति और गति के बारे में संकेत भेजता है।**

जब यह सिस्टम ठीक से काम नहीं करता, तो **वेस्टिबुलर रिहेबिलिटेशन थेरेपी (VRT)** एक प्रभावी समाधान साबित होती है।

वेस्टिबुलर रिहेबिलिटेशन (VRT) क्या है? VRT एक विशेष प्रकार की एक्सरसाइज-आधारित थेरेपी है। इसका मुख्य उद्देश्य मस्तिष्क को आंतरिक कान से आने वाले असामान्य संकेतों को स्वीकार करना और उन्हें नियंत्रित करना सिखाना है। यह दवाइयों के बजाय 'न्यूरोप्लास्टिसिटी' (मस्तिष्क की खुद को ढालने की क्षमता) पर निर्भर करता है।

व्यायाम जो दवा बन गए:- पहले दिन जब उन्होंने मुझे अभ्यास कराया, तो मुझे लगा कि इससे मेरी हालत और खराब हो जाएगी। लेकिन उन्होंने समझाया– *"तुम्हारे दिमाग को फिर से ट्रेनिंग देनी होगी।"*

मेरी दिनचर्या में ये तीन चीजें शामिल हो गईं:-

- **संतुलन के व्यायाम:-** जैसे एक पैर पर खड़े होना, फोम के गद्दे पर चलना, या अपनी आँखें बंद करके खड़े होने की कोशिश करना। यह आपके जोड़ों और मांसपेशियों के संकेतों को मजबूत बनाता है।
- **आँखों के व्यायाम: बिंदु पर ध्यान टिकाना (त्राटक):-** मैंने दीवार पर एक छोटा सा कागज चिपकाया जिस पर एक बिंदु बना था। मुझे अपनी नज़रें उस पर टिकानी थीं और धीरे-धीरे सिर हिलाना था। शुरू में मुझे बहुत उल्टी जैसा महसूस हुआ, लेकिन धीरे-धीरे मेरा दिमाग उस हलचल को समझने लगा।
- **असंतुलन को गले लगाना:** मुझे जानबूझकर उन दिशाओं में झुकना सिखाया गया जिनसे मुझे डर लगता था। यह **'हैबिट्युएशन'** था। दिमाग को बार-बार वही संकेत देकर मैंने उससे डरना बंद कर दिया।

- **अंधेरे में चलना**:- बिस्तर के पास दीवार का सहारा लेकर आँखें बंद करके खड़े होना। इससे मेरे शरीर ने सीखा कि संतुलन के लिए सिर्फ आँखों पर ही नहीं, बल्कि पैरों के स्पर्श पर भी भरोसा करना चाहिए।
- **कान में रुई लगा कर रखना:-** एक डॉक्टर ने मुझे कान में रुई लगा कर रखने की भी सलाह दी। जो मेरे लिए बहुत कारगर साबित हुई। उस डॉक्टर के अनुसार कान में ठंडी हवा लगने से भी चक्कर आने और सिर दर्द की समस्या हो सकती है। इसके अलावा, पार्क में उलटे पैर पीछे की तरफ चलना या आँख बंद करके आगे की तरफ चलने का अभ्यास करना भी शामिल था।
- **बदलाव की आहट:-** दो हफ्तों के बाद, पहला चमत्कार हुआ। मैं बिना सहारे रसोई तक गया और मुझे चक्कर नहीं आए। चार हफ्तों के बाद, मैं पार्क में टहलने लगा। आज, मैं फिर से गाड़ी चला सकता हूँ और बिना किसी डर के लोगों की आँखों में देखकर बात कर सकता हूँ। वेस्टिबुलर रिहेबिलिटेशन ने मुझे सिर्फ चलना नहीं सिखाया, बल्कि मुझे मेरा खोया हुआ आत्मविश्वास भी वापस लौटाया।

मेरा संदेश

“अगर आप भी इस स्थिति से गुजर रहे हैं, तो याद रखें: चक्कर आना कोई सजा नहीं है, यह आपके शरीर का एक संकेत है कि उसे फिर से 'ट्यूनिंग' की जरूरत है। व्यायाम थोड़े कठिन लग सकते हैं, लेकिन वे ही आपकी आजादी का रास्ता हैं”।

श्री नवनीत कुमार,
लेखाकार

<u>“भारत में महिला सशक्तिकरण”</u>

महिला सशक्तिकरण का अर्थ है महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षिक रूप से समान अवसर प्रदान करना ताकि वे अपने जीवन के निर्णय स्वयं ले सकें और समाज में अपने योगदान को प्रभावी रूप से निभा सकें। यह केवल महिलाओं की प्रगति का प्रतीक ही नहीं है, बल्कि किसी भी समाज की प्रगति और विकास का मुख्य आधार भी है। आज का आधुनिक समाज तभी उन्नत माना जाएगा, जब महिलाएं पुरुषों के समान अधिकार और अवसर प्राप्त करें।

भारत में महिला सशक्तिकरण एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया है। भारत की संस्कृति और परंपराएं सदियों से महिलाओं को सीमित भूमिका में देखने की प्रवृत्ति रखती रही हैं। हालांकि, आधुनिक शिक्षा, जागरूकता, और सरकारी व गैर-सरकारी प्रयासों के माध्यम से महिलाओं को उनके अधिकारों और अवसरों के प्रति जागरूक भी किया जा रहा है।

महिला सशक्तिकरण का महत्व:- भारत में महिला सशक्तिकरण का महत्व कई दृष्टियों से देखा जा सकता है।

1. सामाजिक दृष्टि:- जब महिलाएं समान अधिकार प्राप्त करती हैं, तो समाज में लैंगिक समानता बढ़ती है। यह घरेलू हिंसा, बाल विवाह और अन्य सामाजिक बुराइयों को कम करने में मदद करता है।

2. **आर्थिक दृष्टि:-** महिलाएं आर्थिक रूप से सशक्त होंगी तो वे परिवार की आय में योगदान करेंगी। इससे देश की अर्थव्यवस्था भी मजबूत होगी। महिला उद्यमिता और स्वरोजगार के माध्यम से रोजगार सृजन में भी वृद्धि होगी।
3. **राजनीतिक दृष्टि:-** यदि महिलाएं राजनीति में सक्रिय होंगी, तो नीतियां समाज के सभी वर्गों की भलाई पर केंद्रित होंगी। महिला प्रतिनिधित्व से सरकार की निर्णय प्रक्रिया अधिक न्यायपूर्ण और संतुलित होती है।
4. **शैक्षिक और स्वास्थ्य दृष्टि**:-शिक्षित और सशक्त महिलाएं बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देती हैं। इससे पूरे समाज की गुणवत्ता में सुधार होता है।

भारत में महिला सशक्तिकरण की चुनौतियाँ:- भारत में महिला सशक्तिकरण की दिशा में अनेक कदम उठाए गए हैं, लेकिन कई बाधाएं अभी भी मौजूद हैं:-

1. **सांस्कृतिक और पारंपरिक बाधाएं:-**कई ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में महिलाओं को केवल घरेलू जिम्मेदारियों तक सीमित रखा जाता है। पुरुष प्रधान सोच और पुरानी प्रथाएं महिलाओं के विकास में बाधक हैं।
2. **शिक्षा की कमी:-**विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने में कठिनाई होती है। शिक्षा की कमी उनके सशक्तिकरण में सबसे बड़ी बाधा है।
3. **आर्थिक निर्भरता:-** महिलाओं की आर्थिक निर्भरता उनके निर्णय लेने की स्वतंत्रता को कम कर देती है। यह उन्हें घरेलू और सामाजिक स्तर पर कमजोर स्थिति में रखता है।

4. **सुरक्षा और हिंसा की समस्या:-**महिलाओं पर घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न, दहेज हत्या जैसी घटनाएं उनकी सशक्तिकरण प्रक्रिया में बहुत बड़ी बाधा हैं।

5. **राजनीतिक प्रतिनिधित्व की कमी:-**भारत में महिलाओं का राजनीतिक प्रतिनिधित्व कम है। इससे नीति निर्माण में महिलाओं की जरूरतों और समस्याओं को पर्याप्त महत्व नहीं मिलता।

भारत में महिला सशक्तिकरण के प्रयास:- भारत सरकार और विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों ने महिला सशक्तिकरण के लिए कई महत्वपूर्ण योजनाएँ और कार्यक्रम चलाए हैं।

1. **शैक्षिक प्रयास: बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ योजना:-** यह योजना बालिकाओं की शिक्षा और उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए चलायी गई है।

2. **सुकन्या समृद्धि योजना:-** कन्याओं हेतु धन की बचत और शिक्षा में सहायता प्रदान करती है।

3**. महिला शिक्षा के लिए अनुदान:-** कई राज्यों में महिलाओं के लिए मुफ्त या सब्सिडी वाले शिक्षा कार्यक्रम भी चलाए जाते हैं।

4.आर्थिक प्रयास: महिला स्वरोजगार और उद्यमिता कार्यक्रम:- महिलाओं को स्वरोजगार और छोटे व्यवसाय शुरू करने के लिए प्रशिक्षण और ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

5. **स्टार्टअप और स्किल डेवलपमेंट योजना:-** विभिन्न कौशल विकास कार्यक्रमों के माध्यम से महिलाएं आत्मनिर्भर बन रही हैं।

6. **सामाजिक और कानूनी प्रयास: सशक्तिकरण के लिए कानून**:- दहेज निषेध अधिनियम, घरेलू हिंसा कानून, यौन उत्पीड़न विरोधी कानून आदि महिलाओं को सुरक्षा और अधिकार देते हैं।

7. नारी सुरक्षा पहल:- महिला सुरक्षा संबंधी हेल्पलाइन, महिला थाने और महिला सुरक्षा ऐप जैसे कदम महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं।

8. **राजनीतिक प्रतिनिधित्व:-** संसद और विधानसभाओं में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के प्रयासों के साथ ही पंचायतों और नगरपालिका में महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित किया जाना भी, इन क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी बढाता है।

महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका:-

शिक्षा महिलाओं के सशक्तिकरण की नींव है। एक शिक्षित महिला न केवल अपने जीवन में बदलाव लाती है, बल्कि अपने परिवार और समाज में भी सकारात्मक प्रभाव डालती है। शिक्षा के माध्यम से महिलाएं:

- अपने अधिकारों और कर्तव्यों को जानती हैं।
- आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनती हैं।
- बेहतर स्वास्थ्य और पोषण संबंधी निर्णय ले सकती है।
- समाज में समानता और न्याय के लिए आवाज़ उठा सकती है।

महिला सशक्तिकरण में तकनीकी प्रगति का योगदान:-

आधुनिक तकनीकी और डिजिटल सशक्तिकरण महिलाओं को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाने में सहायक हैं। डिजिटल शिक्षा, ऑनलाइन व्यापार, और मोबाइल ऐप्स के माध्यम से महिलाएं अब अपने कौशल का विकास कर सकती हैं।

- **ऑनलाइन शिक्षा:-** ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्र की महिलाएं भी शिक्षा प्राप्त कर सकती हैं।
- **ई-कॉमर्स और डिजिटल मार्केटिंग:-** महिलाएं घर बैठे व्यवसाय चला सकती हैं।

- **सोशल मीडिया और डिजिटल जागरूकता:-** समाज में महिलाओं के मुद्दों को प्रभावी रूप से प्रचारित किया जा सकता है।

महिला सशक्तिकरण का समाज पर सकारात्मक सामाजिक प्रभाव:-

1. **लैंगिक समानता:-** महिलाओं को समान अधिकार और अवसर मिलने से समाज में लैंगिक असमानता कम होती है।
2. **आर्थिक विकास:-** सशक्त महिलाएं परिवार और देश की अर्थव्यवस्था में योगदान करती हैं।
3. **सामाजिक सुरक्षा:-** शिक्षित और जागरूक महिलाएं अपने बच्चों और परिवार की सुरक्षा सुनिश्चित करती हैं।
4. **राजनीतिक स्थिरता:-** महिला नेताओं की भागीदारी से नीति निर्माण अधिक न्यायपूर्ण और संतुलित होती है।

भारत में महिला सशक्तिकरण केवल एक सामाजिक आवश्यकता नहीं, बल्कि राष्ट्रीय विकास की आवश्यकता भी है। महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सुरक्षा के क्षेत्र में समान अवसर प्रदान करना न केवल उनके अधिकारों की रक्षा करता है, बल्कि समाज और राष्ट्र की उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त करता है।

सरकार, समाज और परिवार–इन सभी को मिलकर यह सुनिश्चित करना होगा कि महिलाएं अपनी पूर्ण क्षमता तक विकसित हों। महिलाओं की सशक्तता ही राष्ट्र की सशक्तता है। यदि महिलाएं समान अवसर प्राप्त करें और समाज में सम्मानित स्थान पाएं, तो भारत वास्तव में प्रगतिशील और समृद्ध राष्ट्र के रूप में विकसित होगा।

अंततः, कहा जा सकता है कि “महिला सशक्तिकरण केवल महिलाओं की शक्ति ही नहीं, बल्कि पूरे समाज की शक्ति कही जा सकती है”।

श्री प्रमोद कौरव,
सहायक लेखा अधिकारी

‘गजल’

“बहुत सारे लोग थे..”

वैसे तो मेरे यार बहुत सारे लोग थे।
महफिल में तलबगार बहुत सारे लोग थे।
कश्ती मेरी डूबी ये सभी को पता चला,
दरिया में गुनहगार बहुत सारे लोग थे।
इक काम छोटा सा था, हो न पाया किसी से,
कहने को असरदार बहुत सारे लोग थे।
बदनामी मेरी कानों कान फैली दूर तक,
चलते हुए अखबार बहुत सारे लोग थे।
वो शख्स था कातिल, मगर रसूख़दार था,
तो उसके तरफदार बहुत सारे लोग थे।
हर आदमी में दर्जनों कमियां बताते थे,
भगवान का अवतार बहुत सारे लोग थे।

सुश्री प्रिसिल्ला एंटो,
वरिष्ठ लेखाकार

"खामोश हिम्मत की कहानी"

बिना किसी शोर के, बिना किसी शिकायत के। जब एक माँ को यह समझ आ जाता है कि अब कोई और नहीं है जो ज़िम्मेदारियाँ बाँटे, तब उसकी आँखों में आँसू कम और हौसला ज़्यादा होता है। वह जानती है कि अब उसके बच्चों की पूरी दुनिया उसी के कंधों पर टिकी है और उसी पल वह सिर्फ़ माँ नहीं रहती बल्कि वह पूरा परिवार बन जाती है।

उसकी हर सुबह अँधेरे में शुरू होती है। घर अभी सो रहा होता है, लेकिन माँ की आँखें खुल चुकी होती हैं। वह धीरे-धीरे उठती है, ताकि बच्चों की नींद न टूटे। रसोई में चूल्हे की हल्की आवाज़, टिफ़िन में रखा गया खाना और मन में छुपी अनगिनत चिंताएँ—यही उसकी रोज़मर्रा की दुनिया बन चुकी होती है।

वह काम पर जाती है, लेकिन उसका दिल घर में ही अटका रहता है। दिनभर फाइलों, समय-सीमाओं और ज़िम्मेदारियों के बीच वह बार-बार घड़ी देखती है—जैसे उसका हर मिनट बच्चों से जुड़ा हो। बाहर की दुनिया उसे एक मजबूत और आत्मनिर्भर स्त्री के रूप में

देखती है, लेकिन ये कोई नहीं देखता कि भीतर ही भीतर वह हर दिन खुद को कितना समेटकर खड़ी रहती है।

शाम को घर लौटने पर उसकी थकान उसे बैठने नहीं देती। वह स्कूल बैग खोलती है, कापियाँ देखती है, रसोई में खड़ी होती है और बच्चों की बातें सुनती है - पूरे मन से, भले ही शरीर जवाब दे रहा हो। कई बार उसकी आँखें भर आती हैं, लेकिन वह मुस्कान नहीं छोड़ती, क्योंकि बच्चों के लिए उसका टूटना सबसे बड़ा डर है। बिना किसी सहारे के बच्चों को पालना आसान नहीं होता। जब बच्चा बीमार पड़ता है और ऐसे में ऑफिस भी जाना ज़रूरी होता है, तो उसके लिए वह बहुत ही कठिन घडी होती है। जब स्कूल में किसी कार्यक्रम के लिए माँ को जाना ज्यादा जरूरी होता है, और वो किसी कारण से नहीं जा पाती तब उसकी खामोशी बहुत कुछ बोलती है, क्योंकि जानती है कि वह हर जगह खुद से नहीं पहुंच सकती है। ऐसे में वो हर उस बात के लिए खुद को समझाती है कि कोई बात नहीं, वो सभी काम अकेले नहीं कर सकती हैं। लेकिन वो अपने बच्चों की सभी जिम्मेदारियों को निभाने की कोशिश पूरी-पूरी जारी रखेगी।

इस सफ़र में बच्चे भी जल्दी समझदार हो जाते हैं। वे माँ की थकान को शब्दों से पहले पहचान लेते हैं। वे शोर नहीं करते, माँ के चेहरे की थकान पढ़ लेते हैं। कभी अपने जूते खुद बाँध लेते हैं, कभी बिना कहे अपना काम कर लेते हैं। माँ से कुछ माँगने से पहले सोचते हैं—और यही सोच उन्हें समय से पहले बड़ा बना देती है। कभी-कभी माँ उन्हें देखकर डर जाती है—कहीं उन्होंने अपना बचपन तो नहीं खो दिया? लेकिन फिर वही बच्चे उसका हाथ पकड़कर कहते हैं, **“माँ, आप चिंता मत करो, हम हैं न।”** उस एक वाक्य में उसकी सारी थकान गायब जाती है।

माँ और बच्चे एक-दूसरे का सहारा बन जाते हैं। कोई ऊपर से थामे न थामे, वो और बच्चे एक-दूसरे को थाम ही लेते हैं। उनका परिवार छोटा हो सकता है, लेकिन उसमें समझ, प्रेम और साहस की कोई कमी नहीं होती।

इस कहानी में न कोई नायक है, न कोई खलनायक—बस एक माँ है, जो हर दिन खुद से जीतती है और बच्चे हैं, जो हालात से पहले समझदार हो जाते हैं। वे एक-दूसरे का हाथ थामे आगे बढ़ते हैं—बिना सहारे के, बिना हारे भी।

"ऐसी माँ को दया की नहीं, सम्मान की ज़रूरत है क्योंकि जो स्त्री अकेले अपने बच्चों के लिए पूरी दुनिया बन जाती है, वह कमजोर नहीं होती बल्कि वह तो एक असाधारण स्त्री होती है, जिसे सारी दुनिया माँ के नाम से जानती है"।

सुश्री बबीता राघव,
वरिष्ठ हिंदी अनुवादक

"एक रोमांचकारी अनुभव: लेह-लद्दाख यात्रा"

सौभाग्य से लेह-लद्दाख की यात्रा का अवसर प्राप्त हुआ। इस यात्रा को सौभाग्य ही कह सकते हैं क्योंकि लेह-लद्दाख एक ऐसा दुर्गम स्थान है जहां की यात्रा किसी रोमांच से कम नहीं। लेह-लद्दाख जाने से पहले व्यक्ति का शारीरिक रूप से स्वस्थ रहना भी जरूरी है। अत्यधिक ऊंचाई पर स्थित होने एवं पेड़-पौधे अपेक्षाकृत कम होने के कारण यहां ऑक्सीजन बहुत कम होती है। वर्ष में 9 महीने बर्फ जमी होने से वनस्पति की संभावना भी न्यून हो जाती है लेकिन आसपास के निचले क्षेत्रों में थोडी बहुत वनस्पति पाई जाती है। बारिश भी न के बराबर होती है।

लेह जाने के लिए दिल्ली एयरपोर्ट से सीधी फ्लाइट मिल जाती है, जो लेह पहुंचाने में एक घंटा 30 मिनट का समय लेती है। लेह लद्दाख जाने का सबसे अच्छा समय जून से अगस्त के बीच रहता है क्योंकि इन महीनों में वहां बर्फ पिगल जाती है तथा नयी बर्फ नहीं गिरती है, यद्यपि अगस्त में थोड़ी-थोड़ी बर्फबारी शुरू हो जाती है। श्वास, हार्ट, बीपी इत्यादि के मरीजों के लिए यह स्थान थोड़ा जोखिम भरा हो सकता है किंतु लाइफ सपोर्ट सिस्टम जैसे ऑक्सीजन सिलेंडर इत्यादि की सुविधा आसानी से मिल जाती है। लेह एयरपोर्ट से लेह सिटी की दूरी 4-5 किलोमीटर है जहां होटल इत्यादि की सुविधा है।

लेह प्रस्थान:- सुबह 8.20 पर दिल्ली से लेह के लिए हवाई यात्रा करके हम (मैं एवं पति) 9.45 पर लेह पहुंच गए। लेह पहुंचकर हमने होटल में एक दिन विश्राम किया जो कि वहां के वातावरण में खुद को समायोजित करने के लिए जरूरी था। होटल वालों ने हमें अपने पास शुद्ध कपूर रखने के लिए दी, जो कम ऑक्सीजन या बेचैनी की अवस्था में सूंघ सके। नाश्ता एवं भोजन करने के बाद दिन में विश्राम कर शाम को हमने लेह का स्थानीय हाट-बाज़ार देखा जो कि अपने आप में बहुत सुंदर था। स्थानीय हस्तकला की भरमार तथा लेह निवासियों का हुनर देखने का मौका मिला। इसके साथ ही हमने वहां का स्थानीय व्यंजन थुक्पा, टिमंगो व खम्बीर का स्वाद भी लिया। लेह अपेक्षाकृत ऊँचाई पर स्थित है अतः ज्यादा तेज गति से चलने पर हमारी सांस फूल रही थी इसलिए हमने धीरे-धीरे टहलकर बाज़ार घूमना ज्यादा उचित समझा।

अगले दिन हमने टैक्सी से लेह के पर्यटक स्थलोः **गुरुद्वारा पत्थर साहिब, थिक्से मॉनेस्ट्री, सिंधु व जांस्कार नदी का संगम स्थल, शांति स्तूप, हाल ऑफ फेम, मैग्नेटिक हिल** का भ्रमण किया। लेह स्थित होटल में रात्रि विश्राम करने के बाद अगले दिन की यात्रा नुब्रावेली के लिए सुबह 7 बजे जल्दी शुरू की गई क्योंकि पहाड़ों से बर्फ पिघल कर पानी सड़कों से बहने लगता है जिसमें गाड़ी फंसने की संभावना रहती है। रास्ते भी बहुत दुर्गम एवं खतरनाक थे। रास्ते पर जगह-जगह चेक पोस्ट बनी हुई थीं, जहां एंट्री करवाना होता है। लेह से नुब्रा वैली जाते समय 40 किलोमीटर की दूरी पर खारदुंगला पास या खारदुंगला दर्रा आता है जो संसार का सर्वोच्च मोटरेबल रोड है इसकी ऊंचाई

समुद्र तल से 17,982 फीट है। खारदुंगला पास के दुर्गम फिसलन भरे पहाड़ी रास्तों पर यात्रा करना किसी रोंगटे खड़े कर देने वाले रोमांच से काम नहीं था। जून के माह में भी यहां बर्फ की सफेद चादर बिछी हुई थी। सूरज की किरणें बहुत तीक्ष्ण तथा चारों तरफ बर्फ होने के कारण धूप में बिना चश्में के आंखे खोल पाना असंभव था। हवा बहुत ही ठंडी व तेज चल रही थी। हमारे पहुंचने के कुछ समय बाद ही वहां हल्की बर्फबारी प्रारंभ हो गई सभी सैलानी इधर-उधर छिपने का प्रयास करने लगे। हम भी गाड़ी में आकर बैठ गए तथा आगे की यात्रा प्रारंभ की।

नुब्रा वैलीः- खारदुंगला से नुब्रा वैली जाते समय दिस्किट मॉनेस्ट्री तथा हंडर सैंड-ड्यूनस आते हैं। यहां दूर-दूर तक रेत के टीले दिखाई पड़ते हैं तथा दो कूबड़ वाले ऊंट भी पाए जाते हैं जिन पर सवारी का आनंद लिया जा सकता है। रात्रि विश्राम हमने नुब्रा वैली में किया, यहां सैलानियों के लिए टैंट वाले कॉटेज बनाए हुए थे जिनमें हर सुविधा उपलब्ध थी। नुब्रा वैली अपेक्षाकृत पहाड़ी तलहटी में बसी हुई हरी-भरी घाटी है जहां के सुहावने मौसम में रुकना बहुत ही सुकून भरा अहसास रहा।

पैंगोंग लेकः- नुब्रा वैली से अगले दिन सुबह 6:30 बजे बिना नाश्ता किए ही हमने पैंगोंग लेक के लिए प्रस्थान किया। पहाड़ी क्षेत्रों में जैसे-जैसे सूरज की गर्मी बढ़ती है, पिंघली हुई बर्फ के पानी का बहाव तेज होता जाता है, ऐसे में फिसलन भरे रास्तों पर गाड़ी चलाना खतरों से खाली नहीं होता। पैंगोंग झील पहुंचने से पहले रास्ते में परमिट लेना होता है जिसमें आधार आई.डी. दिखाना होता है। रास्ते में आने वाले कुछ पर्यटक स्थलों को देखते हुए भोजन इत्यादि कर सांय 4:30 बजे हम पैंगोंग झील

पहुंच गए थे। पैंगोंग झील का नज़ारा आंखों में बस जाने वाले किसी स्वप्न लोक के नजारे से कम नहीं था। झील में दिखता साफ नीला आसमान, किनारों पर खड़े विशालकाय वनस्पति रहित सूखे पहाड़, पैंगोंग झील किसी अजूबे से कम नहीं थी। यह स्थान हमारी यात्रा के प्रियतम स्थानों में से एक था। खारे पानी की झील होने के कारण झील का पानी एकदम कांच की तरह साफ था। **यह झील सर्दियों में पूर्णतः जम जाती है तथा विश्व की सबसे ऊंचाई पर स्थित खारे पानी की झील कहलाती है।** पैंगोंग झील पर प्री-पेड सिम का नेटवर्क नहीं मिलता तथा बिजली भी सूरज छिपते ही बंद हो जाती है क्योंकि यहां बिजली मुख्यतः सौर ऊर्जा पर ही निर्भर थी।

पैंगोंग झील के आस-पास कोई स्थाई होटल नहीं था क्योंकि वर्ष के 9 महीने बर्फ जमी होने के कारण यहां होटल निर्माण संभव नहीं है। यहां टैंट वाले अस्थाई कॉटेज अथवा लकड़ी के हट बने हुए थे, जो टूरिस्ट सीजन आने से पहले तैयार कर दिए जाते हैं तथा बर्फबारी आरंभ होने पर उनको हटा लिया जाता है। खाने में वहां अधिकांश जगहों पर वेज मैगी से ही काम चलाना पड़ा तथा पीने का पानी भी अपेक्षाकृत बहुत महंगा था। पैंगोंग झील के किनारों पर बने हुए टैंट सिटी के कॉटेज में रात्रि भोजन एवं विश्राम करने के बाद हमने सुबह 10:00 बजे लेह के लिए प्रस्थान किया तथा सांय 5:00 बजे लेह स्थित होटल पहुंच गए। लेह एयरपोर्ट से दिल्ली के लिए फ्लाइट थी जिसने रात्रि 10:30 बजे दिल्ली उतार दिया और इस तरह घर पर पहुंचकर एक रोमांचकारी अनुभव के साथ हमारी यात्रा समाप्त हुई।

श्री बिजेन्द्र कुमार बेरवाल,
सहायक निदेशक (राजभाषा)

"हमारी स्वर साम्राज्ञी: सुश्री लता मंगेशकर जी"

इस संसार में जहाँ एक ओर जीवन एक सत्य है तो वहीं दूसरी ओर मृत्यु भी उतनी ही सत्य है इस नियम को कोई झुठला नहीं सकता है। जो इस संसार में आया है, उसे एक न एक दिन जाना ही है। चाहे वह कोई राजा हो या रंक, सबके लिए यह नियम एक समान है। इसी नियम के चलते हमारी लता दीदी, स्वर कोकिला और स्वर साम्राज्ञी जैसे उप नामों से जानी-पहचानी जाने वाली अर्थात सुश्री लता मंगेशकर जी, जो काफी समय बीमार भी रही, 92 वर्ष की आयु में दिनांक 06 फरवरी 2022 को उनका निधन हो गया था। इस वर्ष उन्हें गए हुए पूरे 04 वर्ष हो गए हैं। उन्हें गाते हुए आज भी कोई वीडियो देखता हूँ तो लगता ही नहीं है कि वे आज इस दुनिया में नहीं हैं बल्कि ऐसा लगता है कि वे आज भी हैं और वे और दिनों की तरह ही अपने गायन संबंधी कार्य को बखूबी आगे बढ़ा रही हैं। उनकी आवाज में गजब का जादू था। इसे कुदरत का या ऊपर वाले का एक नायाब वरदान ही कह लीजिए कि उनको इतनी मधुर आवाज मिली थी कि जब वो गाती थी तो शायद ही कोई हो जो उनकी आवाज सुनकर वाह-वाह कहने से अपने आपको रोक पाता होगा। कौन दीवाना नहीं था उनकी इस मधुर आवाज का।

जब आप हम जैसे सामान्य लोग भी उनकी आवाज सुनकर अपनी गर्दन हिलाए बिना या झूमे बिना नहीं रह सकते

है तो उन लोगो से पूछो जो इस क्षेत्र की बारीकियों से अच्छी तरह से वाकिफ है, जिन्हें इस जगत की बखूबी समझ है, उनके लिए और उस क्षेत्र के लिए तो लता जी जैसी हस्ती किसी कोहिनूर हीरे से कम नहीं थी। आप यकीन नहीं करेंगे कि जब हम बच्चे हुआ करते थे तो लोग तब भी उनकी इस जादुई आवाज के दीवाने हुआ करते थे और पता नहीं ये बातें सच्ची हैं या झूठी कि लोग कहते थे कि दूसरे देश के लोग कहते है कि जब लता जी इस दुनिया को छोड कर चली जाएंगी तो उस देश के लोग उनकी इस करिश्माई आवाज का पता करने के लिए उनके गले का परीक्षण भी करेंगे, कि उनकी इस मधुर आवाज का क्या रहस्य है?

किसी भी गीत को वह इतनी मधुरता के साथ कैसे गा लेती है? कैसे वह किसी भी गीत में एक मिठास पैदा कर देती है? यह बात लोगों के मन में हमेशा एक सवाल की तरह ही बनी रही। सात दशक तक लता जी सुर साम्राज्ञी बनी रही। लता जी की आवाज के भारत के साथ-साथ विदेशों में भी लोग कायल थे। लता जी के लिए तो कहा जाता है कि उनके जैसा न तो कोई पहले था और न ही कोई भविष्य में होगा, “न भूतो न भविष्यति”। महिला पार्श्व गायन के क्षेत्र में उनकी शख्सियत बहुत ही बडी थी। ऐसा नहीं है कि इस क्षेत्र में उस समय अन्य महिला गायिकाएँ नहीं थीं। जिस जमाने में लता जी ने गीत गायन क्षेत्र में कदम रखा उस समय सिनेमा जगत में नूरजहाँ और शमशाद बेगम जैसी भारी आवाज वाली गायिकाओं का दबदबा बना हुआ था। ये कुदरत का करिश्मा या भगवान की एक विशेष कृपा ही कही जा सकती हैं जो स्थान लता जी को प्राप्त हुआ वैसा शायद किसी और गायिका को प्राप्त हुआ हो। इसलिए, कह सकते हैं कि बहुत कम ही लोगों पर प्रभु की ऐसी कृपा होती हैं, जो दुनिया में अपने

कर्मों से अमर हो जाते हैं। अखबार में छ्पी उस समय की खबरों के अनुसार, लता जी का जन्म 28 सितंबर, 1929 को तत्कालीन इंदौर राज्य, सेंट्रल इंडिया एजेंसी, ब्रितानी, (वर्तमान मध्य प्रदेश, भारत) में एक मराठी परिवार में हुआ। उनका वास्तविक नाम हेमा मंगेशकर था उनके पिताजी ने थिएटर के एक पात्र "लतिका" के नाम पर उनका नाम लता रख दिया था। पांच वर्ष की आयु में लता जी ने अभिनय करना शुरु कर दिया और इसके साथ ही वह अपने पिता से संगीत की शिक्षा भी लेने लगी। लता जी ने उस्ताद अली खां से शास्त्रीय संगीत सीखना शुरु किया और बाद में लता जी ने अमानत खां से भी शिक्षा प्राप्त की और बाद में पंडित तुलसी दास शर्मा और बडे उस्ताद गुलाम अली खां से भी संगीत की शिक्षा हाँसिल की।

लता जी के परिवार में वे दो बहनें (बहन मीना और उषा मंगेशकर) और (भाई हृदय नाथ मंगेशकर) जी थे। लता जी को फिल्मों में काम करने का इतना शौक नहीं था परंतु, पिताजी की मृत्यु के बाद उनके घर की जिम्मेदारी उन पर अधिक थी और परिवार की कमजोर माली हालत के कारण लता जी को फिल्मों में भी काम करना पडा। वर्ष 1942 में उन्होंने पहली बार फिल्म मंगलागौर में काम किया। उन्होंने पहला हिंदी गाना 1946 में आई फिल्म 'आपकी सेवा में' के लिए रिकॉर्ड किया था और उनका आखिरी गाना 2019 में 'सौगंध मुझे इस मिट्टी की' था। लता जी ने काफी भाषाओं में गाने गाए, यदि हम उनका आकलन करें तो कुल मिलाकर 36 से अधिक भाषाओं में वह हजारों गाने गा चुकी थी। उनको फोटोग्राफी का भी बहुत शौक था। उन्हें जब भी मौका मिलता वे अपना समय फोटो खींचने में बिताती थी। **उनका कहना था कि "कुदरत का नियम है कि भागते**

वक्त को पकडा नहीं जा सकता है, लेकिन कैमरों के माध्यम से उस समय के पलों को कैद जरूर किया जा सकता है। उनके अनुसार यह उस कुदरती नियम का एक अपवाद भी कहा जा सकता है"।

"आजादी के अवसर पर उनके द्वारा गाया गीत "ऐ मेरे वतन के लोगों, जरा आंख में भर लो पानी", और "वंदे मातरम्" जैसे गाए गीत आज भी जब हम सुनते हैं तो हमारी आंखों में पानी आए बिना और शरीर में एक अलग प्रकार का जोश महसूस हुए बिना नहीं रहता है" ।

बडे-बडे संगीतकारों का कहना है कि उन्होंने कभी भी कोई भी गीत बेमन से नहीं गाया बल्कि हर एक गीत को पूरे मन और पूरी गहराई के साथ गाया जिसकी वजह से उनका कोई भी गीत आपको सुनने पर बुरा या बेसुरा नहीं लगेगा। बल्कि हर एक गीत एक मिठास से जादू भरा गीत ही लगेगा। चाहे उनका वो 70 साल पहले गाया गीत फिल्म महल का "आएगा आने वाला" गीत हो जिसे आप और हम आज भी कभी-कभी गुनगुना ही लेते हैं, या कोई और गीत, उनके सभी बहुत ही लोक प्रिय हुए। लता जी ने फिल्म इंड्रस्ट्रीज में खुद को एक बार स्थापित करने के बाद फिर पीछे मुडकर नहीं देखा। **लता जी को 2001 में भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से भी सम्मानित किया गया था और लंदन के रॉयल अल्बर्ट हॉल में परफॉर्म करने वाली पहली भारतीय प्लेबैक सिंगर का खिताब भी उनके ही नाम है।** इस दुनिया में हम सभी के बीच उनकी सभी उपलब्धियां, स्मृतियां हमेशा ही बनी रहेंगी।

श्री भूपेन्द्र कुमार,

लेखाकार

‘मैं- पैदाइश पर परिवेश का प्रतिफल’

“मैं ऐसा क्यों हूँ” को जानने की जद्दोजहद में ऐच्छिकता (Free Will), दैवीय शक्तियां (Divine Power), पैदाइश तथा परिस्थितियों का परिवेश जैसे कारकों पर माथापच्ची करने पर यह मनोदृष्टिकोण बना जिसने हांड़ माँस के बने इस ‘होमोसेपियन्स’ के ऐसा-वैसा होने की सहजता को स्वीकार किया। अति सामाजिकता में पले-बढ़े एक बालक का जहाँ गाँव की पगडंडियों में, खेत खलियानों में, गोधूलि बेला में संयुक्त परिवार के बच्चों के झुरमुटों में सोंधी मिट्टी की खुशबू की महक में खेलते हुए गाँव के एक छोर से लेकर दूसरे छोर की हर छोटी से बड़ी बात का नुक्ता-चीनी लगाकर फैलाने तक तथा बाद में महानगरों की एकल परिवारों तक सीमित जिंदगी देख, 10 मिनट में फ्लैट की दहलीज पर त्वरित डिलीवरी, जीवन साथी को शादी डॉटकॉम से खोजना, पूर्वाग्रहों, रूढ़िवादिताओं तथा दकियानूसी सोच से लैस जनमानस से दो-चार होने पर नौ दो ग्यारह होने के बजाय यह जिज्ञासा उफनी कि कोई ऐसा-वैसा क्यों होता होगा?।

वैसे देखा जाए तो इंसान के खुद के वैसा होने में खुद का योगदान अंश मात्र भी होता है यह विवादास्पद हो सकता है।

मनोविज्ञान की भाषा में ऐसा पैदाइश (आनुवंशिकता) तथा परिवेश के कुल जमा के रुप में किया जाता है। इससे इतर ऐच्छिकता (Free will) कारक भी मनोविज्ञानियों को सोचने को मजबूर कर रहा है हालांकि इस पर मंशा पुख्ता नहीं है। प्रसिद्ध मनोविज्ञानी **फ्रांसिस गाल्टन** ने इस कसौटी को **Nature Vs Nurture** की संज्ञा भी दी है। इंसान सिर्फ दो चीजों से मिलकर बना हुआ है जिसमें किसी इंसान की आनुवंशिकता तथा आस-पास का परिवेश शामिल है। आनुवंशिकता व्यक्तित्व निर्माण में इस प्रकार पैर-पखारे है कि इसकी गहराई को इस तरह आंका जा सकता है कि यह व्यक्तित्व के विकास का एक प्रमुख आधार है जो हमें माता-पिता से जीन्स के माध्यम से शारीरिक बनावट, स्वभाव (जैसे-चिड़चिड़ापन, शांत स्वभाव) और कुछ मानसिक क्षमताओं की बुनियादी क्षमता प्रदान करती है। शारीरिक रंग-रुप से लेकर बहुत से शारीरिक विकार जैसे आनुवांशिक बीमारियाँ तक मनुष्य माता-पिता से विरासत में ढोते हैं।

आनुवंशिकता महज एक आधार प्रदान करती है जिस पर विभिन्न पर्यावरणीय कारक जैसे जन्म का स्थान, लिंग, धर्म, जात, शिक्षण संस्थान, संगति इत्यादि अपना प्रभाव ड़ालते हैं। ज्यादा संघर्ष पूर्ण वातावरण में पले-बढ़े व्यक्ति अकसर मानसिक रूप से सुदृढ़ या कुंठा से ओत-प्रोत पाए जाते हैं। बचपन में बिताए गए जीवन तथा शिक्षण सामग्री का व्यक्ति की विचारधारा तथा व्यवसाय में स्पष्ट रुप से झुकाव प्रतीत होता है। उदाहरणार्थ प्रसिद्ध लेखक मुंशी प्रेमचंद की माता का बचपन में देहांत हो जाने फलस्वरूप विमाता द्वारा उनके लालन-पालन करने से उनके लेखन में माता के अभाव को बारीकी से परखा जा सकता है। ऐसा प्रेमचंद कृत कहानी **“दूध का दाम”** में स्पष्ट रूप से झलकता है।

इसी क्रम में प्रसिद्ध मनोविज्ञानी जीन पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development) का सिद्धांत प्रतिपादित किया। इसके अनुसार एक बच्चा पर्यावरणीय घटकों के संपर्क से ज्ञान अर्जित करता है तथा उसी से ज्ञान का Blueprint (Schemas) तैयार किए जाते हैं। अतः दुनिया को देखने का नजरिया पूर्व के अनुभवों से काफी हद तक पूर्वाग्रहित होता है। संगति का प्रभाव किस तरह से इंसान के ऊपर पड़ता है इसे कबीरदास जी के इस दोहे के माध्यम से समझा जा सकता है-

"कबीर, संगत कीजै साधु की, कभी न निष्फल होय।
लोहा पारस परस ते, सो भी कंचन होय"॥

सवाल यहाँ यह खड़ा होता है कि क्या संगति बनाना भी व्यक्ति की ऐच्छिकता पर निर्भर करता है। एक शिशु कैसी पाठशाला में दाखिला लेगा क्या यह उसके वश में होता है और यह क्रम आहिस्ता-आहिस्ता जीवन पर्यंत चलता रहता है। इस आधार पर मनुष्य के अहं को पैरों तले बालू के टिब्बे की भाँति ढ़हाया जा सकता है।

इस तरह आनुवांशिक लिंग तथा सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों से निर्मित लिंग में विभेद को समझा जा सकता है। **वहीं यही परिपाटी पुरूष के पुरूष होने में भी कारगर साबित होती है। इसे सिग्मंड़ फ्राइड (Sigmund Freud) तथा करन हार्नी जैस मनोविज्ञानियों के तर्कों से भी समझा सकता है।**

"मैं ऐसा क्यों हूँ" के कारकों में खुद की शून्यता को महत्ता देकर भाग्यवाद की ओर उन्मुख सोच को पुख्ता करना उद्देश्य नहीं

होना चाहिए, बल्कि इसे कार्य कारण **(Cause and effect)** के रूप में स्वीकार करके हमारी कार्य शैली में यथार्थवाद दिखाई देने वाला और यह हमें अपने से इतर को देखने के नजरिए में बदलाव वाला होना चाहिए। इसके साथ ही कह सकते हैं कि हमें अपनी वर्तमान स्थिति को सहजता के साथ स्वीकार करने से मन शांति प्राप्त होती है। अपने पास मौजूद संसाधनों की उपलब्धता के लिए कृतज्ञ रहते हैं तथा अभावों को पूर्ण करने का प्रयास करते हैं और साथ ही परिस्थितियों की सीमाओं में रहकर उपलब्धि हासिल करने की चेष्टा भी रखते हैं।

विचार व्यक्तिगत हैं।

ऑडिट सप्ताह के दौरान ऑडिट वॉक का छायाचित्र

श्री मनीष कुमार,
लेखाकार

"एक बीमारी, कई सवाल !"

गौरवदीप मेरा मित्र है। कुछ समय से उसकी तबीयत लगातार ठीक नहीं चल रही थी। प्रारंभ में उसे सामान्य बुखार और शरीर में दर्द की शिकायत थी, जिसे उसने साधारण स्वास्थ्य समस्या मानकर नज़र अंदाज किया। जब लक्षण लगातार बने रहे और उसकी दिनचर्या प्रभावित होने लगी, तब चिकित्सकीय परामर्श लेने का निर्णय लिया गया। इसी क्रम में सबसे पहले उसने **वॉकहार्ट अस्पताल** में डॉक्टर को दिखाया, जहाँ आवश्यक चिकित्सीय जाँच कराई गई। जाँच रिपोर्ट के आधार पर डॉक्टरों द्वारा दवाइयाँ दी गईं और नियमित रूप से उनका सेवन करने की सलाह दी गई।

हालाँकि दवाइयाँ लेने के बाद भी उसके बुखार और शरीर के दर्द में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ। स्थिति को देखते हुए आगे परामर्श के लिए उसे **गिरिराज अस्पताल** में दिखाया गया। वहाँ विस्तृत जाँच की गई, जिसमें **यह पाया गया कि उसके शरीर में सूजन का स्तर अत्यधिक बढ़ा हुआ है और उसका C-reactive protein (CRP) स्तर लगभग 300 mg/L तक पहुँच चुका है, जो 0-5 mg/L के बीच होना चाहिए।** डॉक्टरों ने स्थिति को गंभीर मानते हुए उसे तुरंत अस्पताल में भर्ती होने की सलाह दी, जिसके बाद उसे चार

दिनों तक अस्पताल में रहकर इलाज कराना पड़ा। जाँच के दौरान यह भी स्पष्ट हुआ कि उसे **कोलाइटिस की समस्या** है तथा साथ ही **हल्का टाइफॉयड** भी पाया गया। इस दौरान गौरवदीप की हालत को लेकर सभी लोग चिंतित रहे। उनके माता-पिता और परिवार के अन्य सदस्य उत्तर प्रदेश में रहते हैं। उन्हें इतनी दूर अचानक गुजरात आना पड़ा, जो उनके लिए शारीरिक रूप से थकाने वाला और मानसिक रूप से चिंताजनक अनुभव रहा। यह समय पूरे परिवार के लिए तनाव और असमंजस से भरा रहा।

इस पूरे इलाज के दौरान यह बात साफ़ समझ में आई कि ऐसी बीमारियों में हमारे रोज़मर्रा के जीवन से जुड़े कई कारणों का योगदान होता है। आजकल खासतौर से खाने-पीने की चीज़ों की गुणवत्ता की समस्या वास्तविक रूप में सामने आई है। **उदाहरण के तौर पर, हाल ही में अहमदाबाद में 1,121 पानी पुरी के नमूनों में से 280 में ऐसी रंग सामग्री पाई गई जो अनुमत नहीं थी, जिससे दो हजार किलोग्राम से ज़्यादा खराब भोजन नष्ट किया गया। इसी तरह दिल्ली में 2025 में लगभग 200 लोगों को कुट्टू के आटे से बने खाद्य पदार्थ खाने के बाद पेट की समस्या से अस्पताल में भर्ती होना पड़ा, जो प्रदूषित/दुर्व्यवस्थित खाद्य सामग्री का उदाहरण है।** खाद्य पदार्थों पर लिखी जानकारी आम व्यक्ति के लिए इतनी साफ़ नहीं होती कि आसानी से समझ आ जाए। कई बार ऐसा देखा जाता है कि एक ही कंपनी के उत्पाद विदेशों में बेहतर गुणवत्ता के होते हैं, जबकि भारत में मिलने वाले वही उत्पाद अपेक्षाकृत कम गुणवत्ता के होते हैं।

इसी प्रकार पीने के पानी की शुद्धता भी गंभीर चिंता का विषय बनी हुई है। **महज़ कुछ महीने पहले इंदौर में संदिग्ध दूषित पानी की वजह से 25 से अधिक लोग बीमार पड़े थे**, जिससे प्रशासन को अलर्ट जारी करना पड़ा। टाइफॉयड जैसी बीमारी यह संकेत देती है कि स्वच्छ और सुरक्षित पानी अभी भी पूरी तरह उपलब्ध नहीं है। कई घरों में पानी साफ़ करने के उपकरण लगे होने के बावजूद वास्तविक पानी की गुणवत्ता पर भरोसा करना कठिन होता है।

वायु प्रदूषण की बात करें तो हाल के मौसम में दिल्ली-एनसीआर में AQI 400 से ऊपर पहुँच गया था, जो स्वास्थ्य के लिए बेहद खतरनाक स्तर माना जाता है और इसे नियंत्रित करने के लिए सख्त उपाय लागू किए गए थे। वायु प्रदूषण से संबंधित अध्ययन बताते हैं कि भारत में कई शहर दुनिया के सबसे प्रदूषित शहरों की सूची में शामिल हैं और इससे सांस, हृदय तथा अन्य स्वास्थ्य संबंधी गंभीर समस्याएँ होती हैं।

इसलिए आज यह स्पष्ट है कि **केवल बीमारी का इलाज करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि यह भी समझना आवश्यक है कि स्वच्छ भोजन, सुरक्षित पानी और साफ़ वातावरण कितने महत्वपूर्ण हैं।** गौरवदीप की स्थिति केवल एक व्यक्तिगत मामला नहीं है, बल्कि **यह उन व्यापक स्वास्थ्य समस्याओं की ओर संकेत करती है जो हमारे आसपास की जीवन शैली और पर्यावरण से जुड़ी हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि इस अनुभव को एक चेतावनी के रूप में लेते हुए जागरूकता, सावधानी और गुणवत्ता नियंत्रण पर विशेष ध्यान दिया जाए।**

श्री राकेश कुमार,
सहायक लेखा अधिकारी

"खेती का बदलता स्वरूप और उसके प्रभाव"

खेती का बदलता स्वरूप पारंपरिक तरीकों से आधुनिक, तकनीक-आधारित और व्यावसायिक कृषि की ओर एक बड़ा बदलाव है। अब खेती में अधिक उत्पादन के लिए उन्नत बीजों का उपयोग, मशीनीकरण के अलावा ड्रोन से रसायनों का छिडकाव, AI और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT)की महत्ता बढ़ रही है, जिससे उत्पादकता, टिकाऊपन और आय बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। किसान अब केवल पारंपरिक फसलों के बजाय फल, फूल, सब्जियां और औषधीय पौधों की खेती (विविधीकरण) की ओर बढ़ रहे हैं। विपणन की नई तकनीकें जैसे ऑनलाइन बाज़ार के माध्यम से किसान अपनी फसलें सीधे बेचने में सक्षम हो रहे हैं।

खेती का यह स्वरूप हमें अखबारों, संचार माध्यमों और मीडिया द्वारा दिखाया जा रहा है। चिंतन का मुख्य विषय यह है कि खेती का इतना सुंदर रूप होते हुए भी, क्या किसान समृद्ध और खुशहाल है? किसानों के लिए केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा अनेक योजनाएं क्रियान्वित की जा रही है, जिनका लाभ सीधा किसानों तक पहुँच भी रहा है या नहीं? कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा "प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि" के तहत प्रत्येक

किसान को प्रति वर्ष 6000 रूपये उनके बैंक खाते में दिए जाते है। यह राशि किसानों के वित्तीय पोषण में अहम भूमिका निभा रही है।

किसानों को सूदखोरों के चक्रव्यूह से निकालने के लिए, बैंक (Bank) भी अहम भूमिका निभा रहे हैं। किसान बैंकों से किसान क्रेडिट कार्ड (KCC) बनवाकर सस्ती ब्याज दरों (लगभग 7%) पर ऋण ले सकते हैं। बैंक 5 लाख रुपये तक का ऋण खेती, पशुपालन और मछली पालन के लिए कम ब्याज दर पर प्रदान करता है। समय पर भुगतान करने पर 4% प्रभावी ब्याज दर लगती है। इस ऋण का उपयोग खेती के खर्च, कीटनाशक, उर्वरक, बीज खरीदने के लिए नकदी और अन्य ज़रूरतों के लिए किया जा सकता है। अब KCC को सिर्फ खेती ही नहीं, बल्कि पशुपालन और मत्स्य पालन (मछली पकड़ने, तालाब, आदि) गतिविधियों के लिए भी उपलब्ध कराया जा रहा है, जहाँ 2 लाख रुपये तक का लोन बिना गारंटी के मिल सकता है।

किसानों की समृद्धि का आंकलन इस बात से लगाया जा सकता है कि क्या किसान अपने बच्चों को अपनी धरोहर (किसानी) सौंपना चाहते है या नहीं? ग्रामीण परिवेश में इसका जवाब लगभग नकारात्मक ही मिलता है। इसके मुख्य कारणों में: जोत का छोटा होना, खेती के इन्पुट्स (जैसे बीज, खाद, ट्रैक्टर और सिंचाई के साधन) का महंगा होना शामिल है। इसके अलावा, खेती पर मौसम की मार (ओलावृष्टि, अल्प वृष्टि, अतिवृष्टि और तापमान का बढ़ना) जलवायु परिवर्तन के कारण प्रत्येक वर्ष बढती जा रही है।

आधुनिक किसान अपनी आमदनी का लगभग 65% हिस्सा खेती के नियमित इनपुट पर खर्च करता है। उसकी बाहरी स्रोतों पर निर्भरता उसकी हताशा का मूल कारण है। आज के बाजारीकरण के

इस दौर में, महंगे इन्पुट्स लगाने के पश्चात भी, जब मौसम की मार पड़ती है, तो ना केवल फसल बर्बाद होती है बल्कि पिछले वर्ष की कमाई भी चली जाती है। अब बेचारे किसान को अगली फसल लगाने के लिए फिर से महंगे इन्पुट्स की जरूरत होती है। इस तरह, वह ना चाहकर भी सूदखोरों/बैंकों के ऋण-व्यूह में फंस जाता है और इससे निकल पाना उसके लिए असंभव होता है।

किसानों की वर्तमान स्थिति में मशीनीकरण ने भी भूमिका निभाई है। मशीनीकरण ने किसानों के जीवन को न केवल सुखमय बनाया बल्कि उनकी लालसा को और भी बढ़ा दिया है। पहले जो किसान अपने परिवार के साथ केवल 7-10 एकड़ पर मुश्किल से खेती कर पाता था वह आज 50 - 60 एकड़ में खेती कर रहा है। आज का किसान आत्मनिर्भर नहीं बल्कि पूर्णत: बाहरी कारकों पर निर्भर हो गया है। औसतन किसानों का खुद का खेत मात्र 3-4 एकड़ है, बाकी खेत वे प्रत्येक वर्ष किराये पर लेते हैं।

आधुनिक कृषि और किसानों की मृग तृष्णा ने पशुओं को भी अत्यधिक प्रभावित किया है। प्राचीन कृषि पद्धति में पशु का अहम योगदान था। बैल, ऊंट, घोड़ों और भैंसों का उपयोग खेत जोतने और भार ढोने के लिए किया जाता था। ये पशु कृषि उत्पादों का बचा हुआ भाग (भूसा) खाते थे और गोबर और मूत्र के रूप में खाद खेतों को देते थे। इसलिए, प्रत्येक किसान पशुपालन भी करता था। आधुनिक मशीनीकरण ने किसानों की इस ज़रूरत को खत्म कर दिया है। इसलिए किसानों ने पशुपालन में अत्यधिक कमी कर दी है। परिणामस्वरूप, किसानों के पास भूसा अत्यधिक होता है जिसे सरल रुप से निपटान के लिए उसे पराली के रुप में जलाया जाता है। कम

पशु पालने और बड़े स्तर पर खेती करने से उनके पास गोबर की खाद पर्याप्त मात्रा में नहीं होती है। इसलिए रासायनिक खादों पर उनकी निर्भरता रहती है।

आधुनिक कृषि पद्धति न केवल किसानों के जीवन को प्रभावित करती है बल्कि उनके उपभोक्ताओं को भी प्रभावित करती है। रसायनों और कृत्रिम उर्वरकों से तैयार किया गया अनाज, फल, सब्जियां उपभोक्ताओं को पोषण के साथ-साथ बीमारियाँ भी दे रही है। आधुनिक चिकित्सा प्रणाली भी, इन असाध्य रोगों का उपचार करने में सक्षम नहीं है। इन रोगों की मूल जड़ हमारा खान-पान और जीवन-शैली है। प्राकृतिक कंद, मूल, अनाज और पशुओं के उत्पादों ने ही मानव को पोषित किया और उसका विकास हुआ। इसलिए आधुनिकता की मृग तृष्णा को काबू करके पृथ्वी लोक की प्रजातियों (मानव, जानवर, पेड़-पोधे और जीवाणुओं) की एक दूसरे पर निर्भरता पर हम सब को ध्यान देने की जरूरत है। किसानों को पेड़ों और जानवरों की निर्भरता को समझना होगा।

श्री राहुल धायल,
सहायक लेखा अधिकारी

‘कहानीः बाज़ार की रफ्तार से धीमी दिल की धड़कन’

आज सुबह मैंने अपने फोन पर एक नोट देखा–
“आज का बाजार: सब बढ़ रहा है।”
मैंने सोचा, “चलो, शहर की सैर कर लेते हैं।”
पर जैसे ही मैं बाहर निकला, मुझे लगा कि शहर ने मेरे लिए नहीं,
अपने लिए चलना शुरू कर दिया है।
सड़कें पहले से ज़्यादा भीड़ भरी थीं।
हर गली में लोग अपने फोन में लगे थे,
जैसे हर कोई किसी अदृश्य रेस में भाग रहा हो।
मैंने एक रेस्टोरेंट के बाहर देखा–
किसी को टेबल मिलने की चिंता नहीं थी,
क्योंकि वहाँ कोई टेबल वाली जगह खाली ही नहीं थी।
फूड कोर्ट में भीड़ इतनी थी कि अंदर जाने का मन ही नहीं हुआ।
बार के बाहर लोग लाइन में खड़े थे,
और अंदर जाने की जगह तक नहीं मिल रही थी।
मैंने सोच लिया–“शहर में लोगों की आमदनी बढ़ी है।”
पर फिर मैंने रेलवे स्टेशन की तरफ़ देखा।
ट्रेन की टिकट के लिए लोग लंबी लाइन में खड़े थे।
कुछ लोग मुंह पर थकान, आँखों में उम्मीद लिए खड़े थे–

जैसे उन्हें भी कुछ मिलना है- लेकिन किसी का इंतज़ार करना पड़ रहा है।

मैंने ज़ोमेटो, स्विगी के कई डिलीवरी बॉय देखे–

हर गली, हर मोड़ पर।

और फिर एक दुकान पर लिखा था - “न्यू लॉन्च, फोन-2026”

मैंने सोचा, “इतनी नई चीज़ें आ रही हैं, लोगों की खरीदारी कितनी बढ़ रही होगी!”, लेकिन मेरे मन में एक सवाल उभर आया–

“क्या लोग सच में खुश हैं, या बस चल रहे हैं?”

दोपहर को मैं एक मॉल में गया।

अंदर रोशनी, संगीत, लोग, भीड़–सब कुछ ज़िंदा और तेज़ था।

ब्यूटी सैलून के बाहर इंतज़ार की लाइन,

जिम में लोग पसीना बहा रहे थे, और हर जगह एक ही बात–

“कितना खरीदना है?” “कितना फिट रहना है?”

“कितना बड़ा घर चाहिए?” “कितना बड़ी कार चाहिए?”

रात को मैंने न्यूज चैनल खोला, स्क्रीन पर खबरें कम, विज्ञापन ज्यादा।

हर ब्रांड अपने आप को ज़्यादा ज़रूरी बता रहा था।

हर विज्ञापन कह रहा था–“अभी नहीं तो कभी नहीं!”

और लोगों की आँखें उन शब्दों पर टिक गईं।

मैं घर लौटते हुए सड़क पर खड़ा हुआ, और खुद से बोला–

“यह सब बढ़ रहा है, तो फिर मंदी कैसी हो रही है?”

तभी मेरी नजर एक बूढ़े आदमी पर पड़ी।

वह एक छोटी दुकान के बाहर खड़ा था,

और हाथ में एक छोटा सा बैग।

उसके चेहरे पर थकान थी,

पर आँखों में कुछ और भी था–

एक तरह की चिंता, मैंने उससे पूछा,
“भाई साहब, सब कुछ बढ़ रहा है, फिर आप क्यों परेशान हैं?”
उसने धीमी आवाज़ में कहा, “बेटा, बाज़ार तो बढ़ रहा है,
पर मेरे लिए चीज़ें महंगी हो रही हैं।
मैं अब भी काम करता हूँ,
पर पहले की तरह बचत नहीं कर पाता।
हर चीज़ ई.एम.आई पर जा रही है,
और मैं हर महीने उधार चुका रहा हूँ।”
उसकी बात सुनकर मुझे अचानक समझ आया–
शहर में सब कुछ चल रहा है,
पर किसी की ज़िंदगी धीमी पड़ रही है।
अगले दिन मैं फिर शहर गया,
और हर जगह वही तस्वीर–
रेस्टोरेंट, मूवीज, शॉपिंग, जिम, बार...सब कुछ फुल।
लेकिन हर चेहरे पर एक अजीब सी थकान,
और हर मुस्कान में थोड़ी सी मजबूरी।
मैंने अपने आप से कहा–“यह मंदी शायद पैसों की नहीं,
सुकून की है।
लोग खर्च तो कर रहे हैं,
पर अपने लिए समय नहीं निकाल रहे ।
लोग खरीद रहे हैं, पर खुशियाँ नहीं पा रहे।”
और उसी रात, जब मैं सोने लगा,
मेरे दिमाग़ में एक बात घूम रही थी–
“शहर तो चल रहा है, पर एकाएक मन में ख्याल आया कि क्या
हम खुद को खो नहीं रहे हैं?”
सवाल का जवाब मिले तो बताना......

सुश्री रिंकी गुप्ता,
सहायक लेखा अधिकारी

<u>"परदेस की ज़िंदगी में दोस्ती का सहारा"</u>

घर से दूर नौकरी करना सिर्फ शहर बदलना नहीं होता, बल्कि एक पूरी दुनिया पीछे छोड़कर आगे बढ़ने का नाम होता है। माँ के हाथ का खाना, पापा की सलाह, भाई-बहनों की हँसी और पुराने दोस्तों की मस्ती – सब कुछ पीछे छूट जाता है। ऐसे में, नए शहर में अगर कुछ आपको फिर से "घर जैसा" एहसास दिलाता है, तो वह है – ***दोस्ती।***

जब हम किसी अनजान शहर में काम के लिए आते हैं, तो शुरुआत में हर चीज़ अजनबी लगती है। न सड़कें अपनी होती हैं, न बाज़ार जाने का मन करता है, और न ही त्यौहारों में वो रौनक महसूस होती है जो बचपन से घर में देखी है। लेकिन जब अकेलापन धीरे-धीरे दबाव बनने लगे, तब दोस्ती वो सहारा बनती है जो चुपचाप कहती है – ***"मैं हूँ ना।"*** धीरे-धीरे, कॉलोनी के पड़ोसी, ऑफिस के सहकर्मी और आस-पास के लोग हमारे जीवन का वो हिस्सा बन जाते हैं जो सिर्फ दोस्त नहीं, एक नया परिवार बन जाते हैं।

पाँच दिन की भागदौड़, मीटिंग, डेडलाइन और काम का बोझ - यही होती है हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी। सोमवार से शुक्रवार तक हर सुबह जल्दी उठना, जल्दी निकलना, और थककर लौटना। लेकिन

इसी थकान के बीच एक उम्मीद हर दिन साथ चलती है – ***"बस, वीकेंड आने वाला है!"*** पाँच दिन की थकान के बाद शनिवार-रविवार का इंतज़ार सभी को होता है, लेकिन प्रवासी जीवन में यह इंतज़ार कुछ खास होता है ***–"क्योंकि यह समय होता है साथ बैठने, हँसने, और जीने का।"***

एक ऐसा समय जब हम मोबाइल और लैपटॉप से दूर होकर उन लोगों के साथ होते हैं, जो हमारे अपने बन गए होते हैं - दोस्त, जो अब परिवार जैसे बन जाते हैं। जब शनिवार की शाम आती है, तो चेहरे पर एक अलग ही रौनक होती है। सप्ताहांत पर साथ फिल्में देखना, हँसना, बच्चों का साथ खेलना, पत्नियों के साथ मिलकर खाना पकाना और पुरुषों का गपशप में समय बिताना - यही तो होता है एक नए शहर में अपनी-सी दुनिया बसाना।

सप्ताहांत पर साथ बनाया गया खाना सिर्फ स्वाद नहीं, अपनापन बढ़ाता है। मिलकर खेले गए गेम्स सिर्फ मनोरंजन नहीं, रिश्तों की डोर को और मजबूत करते हैं। फिल्में देखना, देर रात तक बातें करना, त्योहार साथ मनाना - ये सब उस खालीपन को भर देते हैं जो दूरी से पैदा होता है। जब कोई बीमार होता है, तो दोस्त ही दवा लेकर आता है। जब कोई उदास होता है, तो वही दोस्त उसकी चुप्पी पढ़ लेता है। यही दोस्त त्यौहारों में साथ बैठकर मिठाइयाँ बाँटते हैं और हर खुशी में पहले मेहमान बनते हैं।

बच्चों के लिए ये दोस्ती और भी खास होती है - क्योंकि अब उनके पास लड़ने-मनाने, दौड़ने-भागने और मिलकर त्योहार मनाने वाले अपने साथी जो होते हैं। अब ये शहर अनजान नहीं लगता–

क्योंकि हमारे पास वो दोस्त हैं, जो हर मुश्किल और हर मुस्कान में हमारे साथ खडे हैं।

अब ये शहर अनजान नहीं लगता,
ना ही दूरियाँ अब बोझ लगती हैं,
क्योंकि कुछ चेहरे ऐसे मिल जाते हैं,
जो हर उदासी में साथ चलते हैं।
घर की रसोई की याद जब सताए,
तो मिलकर दाल-चावल बनते हैं,
बच्चों की किलकारी गूंजती है,
जब दोस्त परिवार बनते हैं।
जो दर्द छुपे हों शब्दों में,
उन्हें मुस्कानों से पढ़ लेते हैं,
जो अनकहे जज़्बात हों दिल में,
उन्हें देर रात की चाय में कह लेते हैं।
हर वीकेंड एक त्योहार बन जाता है,
हर शाम का वक्त एक अपनेपन का अहसास लाता है,
ये दोस्त ही तो हैं जो सिखा देते हैं –
"घर सिर्फ दीवारों से नहीं, रिश्तों से बसता है"।

श्री रितेश कुमार,
बहु-कार्य कर्मी

"किताबों से दोस्ती"

आज की तेज़ रफ्तार भरी ज़िंदगी में हम सब किसी न किसी काम में उलझे रहते हैं। मोबाइल, तकनीक और रोज़मर्रा की जिम्मेदारियों के बीच अपने लिए समय निकालना आसान नहीं होता। जब दुनिया का शोर हमें थका देता है, तब किताबों के पन्ने हमें सुकून की गोद में ले जाते हैं। ऐसे समय में किताबें हमारे जीवन में एक सच्चे मित्र की तरह आती हैं–शांत, भरोसेमंद और हमेशा साथ निभाने वाली। वे हमें सही रास्ता दिखाती हैं और अच्छे-बुरे का फर्क सिखाती हैं। किताबें पढ़ने से मन शांत रहता है और तनाव कम होता है। बच्चों से लेकर बड़ों तक, सभी के लिए किताबें सीखने व ज्ञानवर्धन का सबसे अच्छा साधन हैं। आज के समय में भी किताबें हमारी सच्ची दोस्त हैं।

हाल ही में हमारे कार्यालय में एक अच्छे, बड़े और उपयोगी पुस्तकालय का उद्घाटन हुआ, जो हम सभी ऑफिस के कर्मचारियों के लिए एक सराहनीय पहल है। इस पुस्तकालय का उद्घाटन भारत के माननीय सी.ए.जी (CAG), श्री के.संजय मूर्ति द्वारा किया जाना, अपने आप में इस प्रयास के महत्व को दर्शाता है। यह पुस्तकालय ऑफिस के कर्मचारियों के ज्ञानवर्धन और अध्ययन करने की अच्छी सुविधा प्रदान करने के उद्देश्य से बनाया गया है। पुस्तकालय में कार्मिकों के बैठने हेतु एक अच्छी व्यवस्था भी की गई है, जहाँ

कर्मचारी शान्तिपूर्वक आराम से बैठकर पढ़ सकते हैं। इसके अलावा पुस्तकालय में पढ़ने के लिए अलग-अलग क्यूबिकल्स बनाए गए हैं। जहां हमारे ऑफिस के कर्मचारी बिना किसी शोर-शराबे के एकाग्रचित्त बैठकर पुस्तकें पढ सकते है।

कार्यालय के इस पुस्तकालय में कहानी, उपन्यास, सामान्य ज्ञान, बच्चों की किताबें एवं प्रेरणादायक साहित्य आदि सब उपलब्ध है। यहाँ कार्यालय से संबंधित कार्यों के लिए भी उपयोगी किताबें हैं, जो कर्मचारियों को अपने काम को बेहतर ढंग से समझने में मदद करती हैं, उनके कार्यालयी नियमों संबंधी ज्ञान में ज्ञान वर्धन करती हैं। इसके साथ-साथ वे किताबों भी हैं, जिनसे भाषा और सोच का विकास होता है। दर्शनशास्त्र की किताबें भी उपलब्ध हैं, जो जीवन को समझने और सकारात्मक सोच विकसित करने में सहायक हैं। महापुरुषों की जीवनियाँ भी उपलब्ध हैं जो हमें कठिनाइयों से लड़ना सिखाती हैं। पुस्तकालय में ऐसी अनेक किताबें उपलब्ध हैं, जो ज्ञान, अनुभव और विचारों का एक समृद्ध संसार प्रस्तुत करती हैं।

किताबों से दोस्ती केवल पढ़ाई या परीक्षा तक सीमित नहीं होती। किताबें हमारे सोचने के दायरे को बढ़ाती हैं और हमें नए तरीके से दुनिया को देखने की प्रेरणा देती हैं। जब हम किसी किताब के पन्ने पलटते हैं, तो हम केवल शब्द नहीं पढ़ते, बल्कि उनसे अनुभव, विचार और जीवन के सबक भी सीखते हैं। इसी पर डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जी ने बड़ा खूब कहा है: -

"एक अच्छी पुस्तक हज़ारों दोस्तों के बराबर होती है, जो बिना किसी स्वार्थ के आपको, जीवन की सही राह दिखाती है और आपके मानसिक क्षितिज का विस्तार करती है।"

कार्यालय में स्थापित पुस्तकालय न केवल ज्ञान अर्जित करने का माध्यम है, बल्कि यह मानसिक सुकून और सकारात्मक सोच को

भी बढ़ावा देता है। काम के बीच कुछ समय निकालकर किताबें पढ़ना मन को शांत करता है और कार्यक्षमता में भी वृद्धि करता है। **किताबें हमें धैर्य, समझ और संवेदनशीलता सिखाती हैं – जो एक सरकारी कर्मचारी के लिए अत्यंत आवश्यक गुण हैं।**

सबसे अच्छी बात यह है कि किताबें कभी शिकायत नहीं करतीं और कभी साथ नहीं छोड़तीं। एक अच्छा दोस्त जैसे आपकी परेशानी सुनकर आपका मन हल्का कर देता है, वैसे ही अपनी पसंद की किताब पढ़ने से आपका मानसिक तनाव कम होता है और मन को शांति मिलती है। यही कारण है कि किताबों से दोस्ती जीवन भर निभाई जा सकती है। वर्तमान में आवश्यकता यह है कि हम पुस्तकालय का अधिक से अधिक उपयोग करें और किताबों से अपने रिश्ते को मजबूत बनाएं। रोज़ थोड़ा-थोड़ा समय निकालकर पढ़ने की आदत न केवल हमें बेहतर कर्मचारी बनाती है, बल्कि एक बेहतर इंसान बनने में भी मदद करती है। किताबों से दोस्ती' सिर्फ एक शौक नहीं, बल्कि खुद को जानने और दुनिया को एक नई नजर से देखने का जरिया भी है।

अंत में, मैं यह कहना चाहता हूँ कि किताबें वह मित्र हैं, जो हमें ज्ञान भी देती हैं, मार्गदर्शन भी करती हैं और बिना कुछ माँगे हमारा साथ भी निभाती हैं। निश्चित रुप से कहा जा सकता है कि हमारे कार्यालय में पुस्तकालय की यह पहल कार्मिक और किताबों बीच से इस दोस्ती को और गहरा करने का अवसर प्रदान करेंगी।

"किताब एक मौन गुरु है, जो बिना शोर किए, बिना हड़बड़ी के, और बिना किसी दबाव के आपकी सोच, आपकी भावनाओं और दुनिया को देखने की समझ को नया आकार देती है।”

श्री रुपेन्द्र कुमार शर्मा,
लेखाकार

"वक्त की मार"

वक्त बदल गया कुछ समझ नहीं आ रहा है,
हर रिश्ता एक दूजे से दूर जा रहा है,
एक वक्त हुआ करता था,
जब लोग एक दूजे के लिए जिया करते थे,
आज हर कोई एक दूजे को मतलब के लिए मार गिरा रहा है,
यह सतयुग से कैसा कलयुग आ रहा है,
आज हर रिश्ता एक दूजे से दूर जा रहा है,

एक वक्त था जब आखों में शर्म और मर्यादा थी लोगों में,
लेकिन आज हर कोई इसी मर्यादा को कुचल कर आगे बढना चाह रहा है।
वक्त इतना बदल गया कुछ कि समझ नहीं आ रहा है,
हर रिश्ता एक दूजे से दूर जा रहा है।
भाई-भाई के लिए पहले जहां कुछ भी कर जाता था,
आज की इस लालच भरी मोह माया में क्या फंसा,
वहीं भाई-भाई को मारता हुआ भी आज नहीं घबरा रहा है,
क्यू प्यार रहा नहीं राम-लखन सा रिश्तों में,
क्यों हर रिश्ता टूटता सा नजर आ रहा है,
वक्त कुछ इस तरह बदल गया कुछ समझ नहीं आ रहा है,
हर रिश्ता एक दूसरे से दूर जा रहा है।

वक्त इतना बदल गया कुछ समझ नहीं आ रहा है,
हर रिश्ता एक दूसरे से दूर जा रहा है।

पति-पत्नी एक विवाह बंधन में बनते थे ऐसे,
आजीवन थे रिश्ता ना टूटेगा जैसे,
लेकिन आज कुछ वक्त ऐसा हो चला है कि पति-पत्नी का
रिश्ता भी बदलता जा रहा है।
कहीं जला रहा कहीं मार रहा पति-पत्नी को,
तो कहीं पत्नी नुकसान पहुंचा रही पति को, तो कहीं थोड़े से
दहेज के लालच में, दोनों का रिश्ता कोर्ट में जा रहा है।

आज हर कोई लड़ रहा और है लड़ने को तैयार,
पता नहीं क्यों ऐसा वक्त आ रहा है।
वक्त इतना बदल गया कुछ समझ नहीं आ रहा है,
हर रिश्ता एक दूजे से दूर जा रहा है।

एक वक्त था जब पड़ोसी प्रेम-प्यार से रहा करते थे,
लेकिन आज वही पडोसी, दूसरे पड़ोसी को देखना भी नहीं चाह
रहा है,
एक समय था जब परिवार के सभी सदस्य एक दूसरे, के बुरे
वक्त में साथ देते, लेकिन अब तो परिवार ही, परिवार का
दुश्मन बनता जा रहा है।
आज भी बेटियों को जन्म से मारा जा रहा है,
यह कैसा कलयुग आ रहा है,
वक्त इतना बदल गया कुछ समझ नहीं आ रहा है,
हर रिश्ता एक दूजे से दूर जा रहा है।

मेरे दिल की चाहत यही है कोई पुराना वक्त लौटा दे,
लोगों की नफरतों को दूर करके, उनमें अपनेपन,
इज्जत और प्रेम प्यार की भावना भर दे।

मौत का घर ना बनाओ इस जग को,
ऐसा रहा तो दुश्मन की जरूरत नहीं कहां,
हम ही जो अपने देश को खुद ही मिटा रहे यहां,
ऐ वतन वालों इस दुनिया का कुछ तो ख्याल करो,
यारों हर रिश्तों को लहराने दो, हर किसी को मुस्कुराने दो।

याद रखों ऐ देशवासियों देश की आन,बान,शान सब तुमसे ही तो है,
पहचानो उन प्यार भरे रिश्तों को और फिर से सब को मुस्कुराने दो, फिर से जी जाने दो,
सब की जिंदगी एक बार फिर से संवर जाने दो,
एक बार फिर से संवर जाने दो।

सुश्री लवी आर्या,
सहायक लेखा अधिकारी

“सूखी पूरी: अलग होने की खूबसूरती”

कुछ दिन पहले मकर संक्रांति के मौके पर मैं घर गई हुई थी। त्योहार का माहौल, घर की रौनक और माँ-पापा के साथ बिताया गया समय बहुत अच्छा लग रहा था। हर रविवार शाम की तरह इस बार भी पापा और मैंने मिलकर गोल-गप्पे बनाने का फैसला किया। यह हमारे लिए सिर्फ़ खाना बनाने या खाने का समय नहीं होता, बल्कि साथ बैठकर हँसने-बात करने का एक छोटा-सा बहाना होता है, और मम्मी को एक दिन आराम देने का भी।

गोल-गप्पे बनाने का कार्यक्रम शुरू हुआ और गोल-गप्पे बनाते हुए, कुछ पूरियाँ फूली नहीं और कुछ ज्यादा सिक गई। हमको लगा कि ये पूरियाँ किसी काम की नहीं हैं। तभी मम्मी आई और मम्मी ने कहा कि इन पूरियों को हम पपड़ी की तरह इस्तेमाल करेंगे–ऊपर आलू और मीठी चटनी डालकर अंत में खाएंगे। उन्होंने यह भी कहा कि इन्हें दही,चटनी और भुजिया के साथ भी खाया जा सकता है। यह सुनकर मुझे लगा कि जो पूरी नहीं फूली, वह भी कितनी काम की है।

सब ने मिलकर गोल-गप्पे खाना शुरू किया और फिर जब गोल-गप्पे खाते-खाते पेट भर गया, तब आखिर में सूखी पूरी मिली और उसके ऊपर आलू डाला गया, तो अपने आप चेहरे पर मुस्कान

आ गई। ऐसा लगा जैसे सब्र रखने के बाद कोई एक्स्ट्रा गोल-गप्पा मिला हो, जिसके लिए पेट में अभी भी अलग से जगह है। वह सबसे अलग था, क्योंकि जो सबसे आखिर में आया था वह सबसे ज़्यादा कुरकुरा था। अक्सर ज़िंदगी में भी जो चीज़ें सबसे खास होती हैं, वे थोड़ी देर से ही मिलती हैं।

वैसे अगर गोलगप्पों की प्लेट में बीच में ही सूखी पूरी जैसा गोलगप्पा आ जाए, तो हम तुरंत गोल-गप्पे वाले से कह देते हैं कि "ये अच्छा नहीं था, दूसरा दे दो।" लेकिन अगर आखिर में गोल-गप्पे वाला सूखी पूरी न दे, तो हम खुद माँगते हैं। तब समझ आता है कि किसी चीज़ की क़ीमत उसके समय और जगह पर निर्भर करती है। जो चीज़ बीच में गलत लगती है, वही कई बार जीवन में आखिर में ज़रूरी भी लगने लगती है।

सूखी पूरी से हम अपने गोल-गप्पे खाने की पूरी श्रृंखला को एक पूर्ण विराम देते हैं। वह बीच में आ जाए तो अच्छा नहीं लगता, लेकिन अंत में वही सही लगती है। जैसे ज़िंदगी में भी हर चीज़ की एक सही जगह और सही समय होता है। हर चीज़ हर जगह फिट नहीं बैठती है।

सूखी पूरी को ध्यान से देखें, तो वह वही पूरी होती है जो या तो पूरी तरह फूल नहीं पाती या ज़्यादा सिक जाती है। यानी गोलगप्पों के तय मानकों पर वह खरी नहीं उतरती, पर इसके बावजूद, उसे सबसे आखिर में "वीआईपी" की तरह दिया जाता है। तभी मुझे एहसास हुआ कि कोई चीज़ अगर अलग है या मानकों के हिसाब से "खराब" है, तो इसका मतलब यह नहीं कि वह सच में बुरी ही हो।

सूखी पूरी में देखा जाए, तो गलती उसकी भी नहीं होती। वह बस किसी छोटी-सी चूक का नतीजा होती है, लेकिन वही चूक एक

बहुत ख़ूबसूरत रचना बन जाती है। ज़िंदगी में भी ऐसी कई चीज़ें होती हैं जो हमें गलत साबित कर देती हैं, हमें अलग बना देती हैं, लेकिन शायद उनका अंत बहुत सुंदर होता है।

असल में, फर्क इस बात से पड़ता है कि किसी चीज़ को कैसे देखा जाता है और कैसे पेश किया जाता है। सूखी पूरी को जब "आख़िरी खास" मानकर दिया जाता है, तो वही उसकी पहचान बन जाती है। उसी तरह ज़िंदगी में भी अगर किसी इंसान के अकेलेपन को सही समय और सही नज़र से देखा जाए, तो वही उसका अकेलापन उसकी सबसे बड़ी ताक़त बन सकता है।

आखिर में मुझे यह बात समझ आई कि हर चीज़ का अपना एक सही समय और सही स्थान होता है। जो चीज़ भीड़ से अलग होती है, वह ज़रूरी नहीं कि खराब ही हो। सूखी पूरी ने यह सिखाया कि जो पूरी अपने तय रूप में नहीं बन पाती, वही अंत में सबसे खास बन जाती है। ज़िंदगी में भी कई बार हम या हमारे हालात दूसरों से अलग होते हैं, और तब हमें लगता है कि हम ठीक नहीं हैं। लेकिन समय के साथ इंसान की वही भिन्नता उसकी पहचान बन जाती है। शायद इसीलिए ज़िंदगी में वही पल सबसे ज़्यादा याद रहते हैं, जो सबसे अलग और सबसे अतरंगी किस्से हमारे हिस्से आते हैं– बिल्कुल उस आख़िरी, कुरकुरी सूखी पूरी की तरह। 🌸

श्री नीरज कुमार विमल,
लेखाकार

"बचपन"

काश लौट आए वो बचपन
कंधो पर वह भारी बस्ता और
चेहरे की वो मुस्कान
वह बेफिक्री का आलम
काश लौट आए वो बचपन
मैं बेशर्त बदल लूंगा यह मोबाइल
उस पुराने क्रिकेट बैट से
दे दो वह मुझे मेरी निक्कर
बजाय इस महंगी जींस के
नहीं चाहिए यह पिज़्ज़ा,
खिला दो मुझे पानी-पुरी और भेल
काश लौट आए वह बचपन
वो बर्फ का गोला
वह 7 रुपए की काली गेंद
वो पल भर की लडाइयां
वो मासूम सच्ची दोस्ती
काश लौट आए वो बचपन ।

श्री शशांक यादव,
बहु-कार्य कर्मी

“स्वतंत्रता”

आज़ादी बस एक शब्द मात्र रह गया,
कोई है जो गलत को गलत कहे बिना रह गया।
कि अगर चुप हो तो, खुद को गुलाम समझ लो,
कुछ बोल लिख न सको तो भीतर के तूफान से उलझ लो।
हम शहीदों की ख्वाहिशों का क्या हाल कर रहें हैं?
वो दीमक की तरह खा रहे है मुल्क,
हम बस सवाल कर रहे हैं।
सब कुछ लगाकर दाव पर,
सेनानियों ने एक सपना सँजोया था,
समझेगा अर्थ आज़ादी का मानव,
ये सोचकर अपना सब कुछ खोया था।
हम आज भी खाली हाथ है, आज़ादी के इन मसलों पर,
किया क्या चाँद पर जाकर जब लड़ रहे हैं धर्म की नस्लों पर।
देख हालत देश के आज, शर्मसार संविधान है,
धर्म-जाति में बंटा हुआ ये कैसा हिंदुस्तान है?
हो चाहे घोटाले परीक्षा के, चाहे हो मसला वोट का,
जनहित की फिक्र है किसे यहाँ, नशा है सारा नोट का।

सुश्री श्रेष्ठा राखेचा,
आशुलिपिक ग्रेड-II

“कार्य और परिवार के बीच संतुलन”

भारत की लेखा प्रणाली में कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखा व हक.), गुजरात का विशिष्ट स्थान है। यहाँ कार्यरत केंद्रीय सरकारी कर्मचारी प्रतिदिन 9:30 से 6 बजे तक राज्य की वित्तीय व्यवस्थाओं—वेतन, पेंशन, लेखा और अधिकार—का सूक्ष्म परीक्षण करते हैं।

परंतु इन औपचारिक घंटों के पीछे एक मानवीय जीवन भी चलता है—जिसमें परिवार, दूरी, समय-प्रबंधन और संतुलन की सतत आवश्यकता शामिल है।

1. 9:30 से 6 – समय की सीमा, दायित्व की गहराई: - कार्यालय का समय निश्चित है, और बायोमेट्रिक उपस्थिति प्रणाली इसकी शांत प्रहरी। वह अत्यंत निष्पक्ष है—न दूरी जानती है, न ट्रैफिक।

“कार्यालय में दिन का प्रथम औपचारिक अभिवादन वरिष्ठ अधिकारी से पूर्व बायोमेट्रिक मशीन को ही किया जाता है।”

2. 60-70 किलोमीटर का दैनिक अध्याय: - कुछ कर्मचारी ट्रेन, कुछ बस और कुछ निजी वाहन से लंबी दूरी तय करते हैं। सुबह की भागदौड़ कुछ ऐसी होती है: अलार्म 6 बजे, 7 बजे तक घर से

निकलना, रास्ते में ट्रैफिक या भीड़, और मन में बस एक ही चिंता – "9:29 तक बायोमेट्रिक लग जाए!"

अब केवल उंगली से हाजिरी लगाना ही पर्याप्त नहीं – कई बार मशीन हमें देखती भी है और हमसे अपेक्षा करती है कि हम पलकें भी झपकाएँ।

कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है मानो मशीन यह सुनिश्चित कर रही हो कि कर्मचारी सचमुच जाग रहे हैं। पलक झपकाने के पश्चात स्क्रीन पर **"प्रमाणीकरण सफल रहा"** प्रदर्शित हो जाए, तो वह क्षण किसी प्रशासनिक उपलब्धि से कम नहीं होता। लेकिन इस मुस्कान के पीछे रोज़ की दौड़, जिम्मेदारियों का दबाव और समय से संघर्ष की कहानी छिपी होती है।

पुरुष और महिला - दोनों की वास्तविकता

➢ **पुरुष कर्मचारी**

पुरुष कर्मचारियों से प्रायः यह अपेक्षा की जाती है कि वे परिवार की आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करें। कार्यालय में लेखा परीक्षण, पेंशन, वेतन और वित्तीय विवरणों का सूक्ष्म परीक्षण करने के पश्चात जब वे घर लौटते हैं, तो उनकी भूमिका परिवर्तित हो जाती है– **वे पिता, पुत्र और जीवनसाथी के रूप में उपस्थित होते हैं।**

यदि संतुलन साधा न जाए, तो दिनभर की थकान पारिवारिक संवाद को प्रभावित कर सकती है। अतः उनके लिए यह आवश्यक है कि वे कार्य और परिवार दोनों में समान भावनात्मक उपस्थिति बनाए रखें।

➢ **महिला कर्मचारी**

महिला कर्मचारियों के लिए संतुलन का प्रश्न अधिक बहुआयामी हो सकता है। कार्यालय की जिम्मेदारियों के साथ-साथ

घरेलू दायित्व, बच्चों की देखभाल और सामाजिक अपेक्षाएँ–ये सभी समानांतर चलते हैं। 9:30 से 6 का कार्यकाल पूर्ण होते ही उनका 'द्वितीय कार्यकाल' घर पर आरंभ हो जाता है।

"कार्यालय में लॉग-आउट संभव है, परंतु परिवार में सेवा-काल स्थायी नियुक्ति जैसा होता है।"

हालाँकि वर्तमान समय में दायित्वों का साझा निर्वहन बढ़ रहा है, फिर भी संतुलन के लिए पारस्परिक सहयोग और संवेदनशीलता अनिवार्य है।

3. सप्ताहांत – अवसर, समाधान नहीं:- शनिवार और रविवार का अवकाश कर्मचारियों को परिवार के साथ समय बिताने, स्वास्थ्य सुधारने और लंबित घरेलू कार्यों को पूरा करने का अवसर देता है। किन्तु केवल सप्ताहांत ही संतुलन का साधन नहीं हो सकता। यदि पाँच दिन अत्यधिक तनावपूर्ण हों, तो दो दिन का विश्राम पर्याप्त नहीं होता।

अतः संतुलन एक निरंतर प्रक्रिया है, न कि केवल अवकाश पर आधारित व्यवस्था।

कार्य और व्यक्तिगत जीवन में संतुलन कैसे बनाए रखें?

1. **समय का सूक्ष्म प्रबंधन:-** कार्यालय समय में पूर्ण एकाग्रता से कार्य कर अनावश्यक विलंब से बचें। "कार्यस्थल पर कार्य" और "घर पर परिवार" का स्पष्ट विभाजन संतुलन की प्रथम शर्त है।

2. **यात्रा का सकारात्मक उपयोग:-** 60 किलोमीटर की यात्रा को मानसिक विश्राम, पठन या चिंतन का समय बनाया जा सकता है।

इसे तनाव का कारण नहीं, संक्रमण काल (transition time) के रूप में देखें।

3. **जिम्मेदारियों का साझा निर्वहन:-** पति-पत्नी दोनों घरेलू और पारिवारिक दायित्वों को समान रूप से साझा करें। संतुलन सहयोग से ही संभव है, त्याग से नहीं।

4. **परिवार के साथ गुणवत्ता समय**: - प्रतिदिन भले ही समय सीमित हो, परंतु वह गुणवत्तापूर्ण हो। बच्चों के साथ संवाद, जीवनसाथी के साथ चर्चा और बुजुर्गों के साथ समय–ये भावनात्मक स्थिरता देते हैं।

5. स्वयं के लिए समय:- स्वास्थ्य, व्यायाम और मानसिक **शांति** के लिए समय निकालना आवश्यक है। एक संतुलित कर्मचारी ही संतुलित परिवार और प्रभावी कार्य का आधार बनता है।

6. सप्ताहांत का योजनाबद्ध उपयोग: - शनिवार और रविवार को केवल विश्राम नहीं, बल्कि संबंधों को सुदृढ़ करने और आत्म-विकास के अवसर के रूप में उपयोग करें। 9:30 से 6 का अनुशासन, 60 किलोमीटर की यात्रा और बायोमेट्रिक की समय निष्ठता–इन सबके बीच वे अपने जीवन का संतुलन निर्मित करते हैं।

"कार्यालय में "उपस्थिति" दर्ज कराना कर्तव्य है,
परिवार में "उपस्थित" रहना उत्तरदायित्व"।

जब दोनों का लेखा संतुलित हो जाता है, तभी जीवन की वास्तविक ऑडिट सफल मानी जाती है–और यही कार्य तथा परिवार के बीच संतुलन की सच्ची परिभाषा है।

श्री सतीश कुमार,
सहायक लेखा अधिकारी

“सरकारी सेवा में मानवीय संवेदनाएं”

सरकारी सेवा केवल नौकरी नहीं, बल्कि जनसेवा का एक पवित्र दायित्व है। इसमें कार्य करने वाले अधिकारी और कर्मचारी प्रतिदिन विभिन्न वर्गों के लोगों से मिलते हैं—गरीब, अमीर, शिक्षित, अशिक्षित, वृद्ध, युवा, महिलाएँ और दिव्यांग। प्रत्येक व्यक्ति अपनी समस्या, आशा और विश्वास के साथ सरकारी कार्यालय में आता है। ऐसे में सरकारी सेवक का व्यवहार ही यह तय करता है कि नागरिक सरकार के प्रति सम्मान और विश्वास महसूस करेगा या निराशा। इसलिए सरकारी सेवा में मानवीय संवेदनाओं का होना अत्यंत आवश्यक है।

मानवीय संवेदनाएँ वह गुण हैं, जिनसे व्यक्ति दूसरों की परिस्थितियों को समझता है, उनके दुख-दर्द में सहभागी बनता है और सहायता के लिए तत्पर रहता है। सरकारी कर्मचारी यदि केवल नियमों और आदेशों तक सीमित रह जाए, तो उसका कार्य यांत्रिक बन जाता है। परंतु जब वही कर्मचारी सहानुभूति, धैर्य और विनम्रता के साथ काम करता है, तो प्रशासन में मानवीयता का संचार होता है। उदाहरण के लिए, किसी वृद्ध व्यक्ति को पेंशन से संबंधित कार्य में बार-बार चक्कर लगाने पड़ें, तो संवेदनशील अधिकारी स्वयं पहल

करके उसका कार्य शीघ्र कर सकता है। इससे न केवल एक व्यक्ति की परेशानी दूर होती है, बल्कि पूरे तंत्र के प्रति सकारात्मक संदेश जाता है।

सरकारी सेवा में मानवीय संवेदनाएँ केवल जनता के प्रति ही नहीं, बल्कि सहकर्मियों के प्रति भी उतनी ही आवश्यक हैं। कार्यालय एक ऐसा स्थान है जहाँ विभिन्न स्वभाव, पृष्ठभूमि और कार्यशैली वाले लोग साथ-साथ काम करते हैं। यदि आपसी व्यवहार कठोर, प्रतिस्पर्धी या असहयोगपूर्ण हो, तो कार्य वातावरण तनावपूर्ण हो जाता है और कार्यक्षमता घट जाती है। इसके विपरीत यदि सहकर्मी एक-दूसरे के प्रति सम्मान, सहयोग और सद्‌भाव का भाव रखें, तो कार्यस्थल परिवार जैसा बन जाता है।

अच्छा व्यवहार कार्यस्थल की सफलता की कुंजी है। एक मुस्कान, नम्र शब्द या छोटी-सी सहायता भी सहकर्मी के मनोबल को बढ़ा सकती है। जब कोई कर्मचारी व्यक्तिगत समस्या, स्वास्थ्य समस्या या पारिवारिक तनाव से गुजर रहा हो, तब उसके प्रति सहानुभूति रखना अत्यंत आवश्यक है। ऐसे समय में सहकर्मियों का सहयोग उसे मानसिक शक्ति देता है और वह शीघ्र सामान्य होकर अपने कार्य में लग जाता है।

गलतियों को नजरअंदाज करना भी मानवीय संवेदनाओं का महत्वपूर्ण पहलू है। मनुष्य से ही भूल होती है; कोई भी व्यक्ति पूर्ण नहीं होता। यदि कार्यालय में छोटी-छोटी गलतियों पर कठोर आलोचना या अपमान किया जाए, तो कर्मचारी भयभीत हो जाता है और उसका आत्मविश्वास कम हो जाता है। इसके बजाय यदि वरिष्ठ या सहकर्मी

समझदारी से गलती सुधारने का अवसर दें, मार्गदर्शन करें और भविष्य में सावधानी बरतने को प्रेरित करें, तो व्यक्ति बेहतर प्रदर्शन कर सकता है।

हालाँकि गलतियों को नजरअंदाज करने का अर्थ अनुशासनहीनता को बढ़ावा देना नहीं है। गंभीर त्रुटियों को सुधारना आवश्यक है, परंतु सुधार की प्रक्रिया में मानवीय दृष्टिकोण होना चाहिए। उद्देश्य व्यक्ति को दंडित करना नहीं, बल्कि उसे सक्षम बनाना होना चाहिए। संवेदनशील अधिकारी अपने अधीनस्थों को डाँटने के बजाय समझाकर, प्रशिक्षण देकर और प्रेरित करके बेहतर कार्य के लिए तैयार कर सकता है।

कार्यालय में आपसी सम्मान और विश्वास से टीम-वर्क मजबूत होता है। जब कर्मचारी यह महसूस करते हैं कि उनकी बात सुनी जाती है और उनके साथ न्यायपूर्ण व्यवहार होता है, तो वे अधिक निष्ठा और ईमानदारी से काम करते हैं। इससे भ्रष्टाचार, तनाव और आपसी विवाद कम होते हैं तथा प्रशासनिक कार्य सुचारु रूप से चलता है।

आज के युग में कार्यभार, समय-सीमा और तकनीकी दबाव के कारण कई बार सरकारी सेवक तनाव में रहते हैं। यदि इस तनाव के बीच मानवीय संवेदनाएँ समाप्त हो जाए, तो प्रशासन कठोर और निर्जीव बन जाता है। इसलिए आवश्यक है कि अधिकारी और कर्मचारी समय-समय पर आत्ममंथन करें और याद रखें कि उनका कार्य केवल फाइलों को निपटाना नहीं, बल्कि लोगों के जीवन को सरल बनाना भी है।

मानवीय संवेदनाएँ प्रशासन की पारदर्शिता और विश्वसनीयता को भी बढ़ाती हैं। जब जनता को सम्मानजनक व्यवहार मिलता है, तो वह नियमों का पालन करने के लिए प्रेरित होती है और व्यवस्था के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करती है। इसी प्रकार, सहकर्मियों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध कार्यस्थल को सुरक्षित और सुखद बनाते हैं, जिससे उत्पादकता बढ़ती है।

अंततः कहा जा सकता है कि सरकारी सेवा में मानवीय संवेदनाएँ ही प्रशासन की आत्मा हैं। जनता के प्रति सहानुभूति, सहकर्मियों के प्रति सम्मान, गलतियों के प्रति उदार दृष्टिकोण और सेवा-भाव—ये सभी मिलकर एक आदर्श सरकारी सेवक का निर्माण करते हैं। यदि प्रत्येक कर्मचारी इन मूल्यों को अपनाए, तो सरकारी तंत्र केवल आदेश देने वाला संस्थान न रहकर सच्चे अर्थों में "जनसेवा" का माध्यम बन सकता है।

इस प्रकार, मानवीय संवेदनाओं से युक्त सरकारी सेवा न केवल कार्य को प्रभावी बनाती है, बल्कि समाज में विश्वास, सहयोग और सद्भाव की भावना को भी मजबूत करती है। यही किसी भी लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की सबसे बड़ी सफलता है।

श्री सुखदेव गोयल,
कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

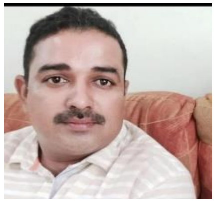

“आदत: एक जड़ता”

मनुष्य का जीवन बहुत सारी आदतों से घिरा हुआ है। सुबह उठने से लेकर सोने तक हम जो कुछ भी करते हैं, उसका अधिकांश हिस्सा हमारी आदतों का रुप ले चुका होता है। आदतें जीवन को सुगम बनाती हैं, पर जब वही आदतें चेतना के स्थान पर जड़ता बन जाती हैं, तब वे मनुष्य की स्वतंत्रता और विकास में बाधा बन जाती हैं। विभिन्न दार्शनिकों एवं विचारकों ने इस विषय पर अलग-अलग आयामों को स्थापित करते हुए अपने विचारों को व्यक्त किया है। मेरे जीवन में यह विषय तब आया जब मैं स्वयं 35 वर्ष की दहलीज को पार कर चुका था।

ओशो ने आदतों को मनुष्य की सबसे बड़ी कैद बताया है। ओशो के अनुसार, आदतें अतीत की परछाइयाँ हैं। हम जो कल थे, वही आज दोहराते रहते हैं। आदत हमें सुरक्षित महसूस कराती है क्योंकि उसमें जोखिम नहीं होता, नया नहीं होता। लेकिन जहाँ सुरक्षा है, वहाँ जीवन नहीं है। जीवन तो निरंतर परिवर्तन है। आदत मनुष्य को मशीन की तरह बना देती है—एक ही ढर्रे पर चलने वाला, बिना जागरूकता के कार्य करने वाला।

ओशो कहते हैं कि जब कोई व्यक्ति आदत से काम करता है, तो वह उपस्थित नहीं होता। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति रोज़ गुस्सा करता है, तो धीरे-धीरे गुस्सा उसकी आदत बन जाता है। फिर वह यह भी नहीं जानता कि वह क्यों क्रोधित है। प्रतिक्रिया अपने आप हो जाती है। यही जड़ता है—चेतना का अभाव।

आदतें इसलिए भी खतरनाक हैं क्योंकि वे व्यक्ति को भ्रम देती हैं कि वह जी रहा है, जबकि वास्तव में वह केवल दोहरा रहा होता है। **ओशो के शब्दों में, "जो व्यक्ति आदत में जीता है, वह जीवित नहीं है, वह केवल अतीत को ढो रहा होता है।"** आदत हमें अतीत से बाँध देती है और वर्तमान क्षण से काट देती है, जबकि सत्य और आनंद केवल वर्तमान में ही संभव है।

ओशो आदतों को तोड़ने के लिए संघर्ष या जबरदस्ती के पक्ष में नहीं हैं। वे कहते हैं कि आदत को छोड़ना नहीं है, बल्कि उसे देखना है। जैसे ही हम अपनी आदतों को पूरी जागरूकता से देखने लगते हैं, वे स्वतः कमजोर होने लगती हैं। जागरूकता आदत की मृत्यु है। जब व्यक्ति सजग होकर जीने लगता है, तब हर क्षण नया हो जाता है। तब वही कार्य, वही परिस्थिति हमें बोझ नहीं लगती। आदत की जड़ता टूटती है और जीवन में प्रवाह आता है। इसलिए ओशो के अनुसार, मुक्ति का मार्ग आदतों से लड़ने में नहीं, बल्कि सचेत जीवन जीने में है।

आदत मूलतः बार-बार किए गए कर्मों का परिणाम होती है। जब कोई कार्य निरंतर दोहराया जाता है, तो वह बिना सोचे-समझे होने लगता है। व्यक्ति वर्तमान क्षण में उपस्थित नहीं रहता, बल्कि

अतीत के अनुभवों के आधार पर ही जीने लगता है। इस अवस्था में जीवन में नवीनता, सृजनशीलता और स्वतंत्रता का अभाव हो जाता है। मनुष्य जीवंत व्यक्ति न रहकर एक चलती हुई मशीन जैसा बन जाता है।

जड़ता का अर्थ है—परिवर्तन से डरना। आदतें हमें परिचित ढांचे में सुरक्षित महसूस कराती हैं, इसलिए हम नया प्रयोग करने से बचते हैं। चाहे वह सोच की आदत हो, क्रोध करने की आदत हो या किसी निश्चित ढर्रे पर जीने की आदत—सब हमें बाँध लेती हैं। धीरे-धीरे व्यक्ति यह मानने लगता है कि वही उसका स्वभाव है, जबकि वास्तव में वह केवल अभ्यास का परिणाम होता है।

आदतें समाज और व्यक्ति दोनों को प्रभावित करती हैं। सामाजिक कुरीतियाँ भी सामूहिक आदतों का ही रूप होती हैं, जो समय के साथ जड़ हो जाती हैं। जब लोग बिना प्रश्न किए परंपराओं का पालन करते हैं, तब विकास रुक जाता है। प्रश्न करना, सोचना और बदलना—ये सब आदतों की जड़ता के विरोध में खड़े होते हैं।

आदत से मुक्ति का मार्ग संघर्ष में नहीं, बल्कि जागरूकता में है। जब व्यक्ति अपने कर्मों, विचारों और प्रतिक्रियाओं को सजग होकर देखने लगता है, तब आदतें स्वतः ढीली पड़ने लगती हैं। चेतना आदत की जड़ता को तोड़ देती है और जीवन में प्रवाह लाती है।

स्वामी विवेकानंद ने "आदतों को आत्म-निर्माण का साधन माना। उनके अनुसार, मनुष्य जैसा सोचता है, वैसा ही बन जाता है। निरंतर अभ्यास और सही आदतों के द्वारा व्यक्ति अपने व्यक्तित्व

को गढ़ सकता है। वे कहते हैं कि कमजोर बनाने वाली आदतें आत्मविश्वास को नष्ट करती हैं, जबकि दृढ़ और सकारात्मक आदतें आत्मशक्ति को जाग्रत करती हैं। विवेकानंद के लिए आदत जड़ता नहीं, बल्कि साधना बन सकती है—यदि वह चेतन रूप से अपनाई जाए।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अचेतन आदत जड़ता है, और सचेत आदत विकास का मार्ग। जब मनुष्य बिना सोचे-समझे जीता है, तो वह आदत का गुलाम बन जाता है; और जब जागरूक होकर जीता है, तो वही आदत आत्मोन्नति का साधन बन जाती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आदत सुविधा देती है, लेकिन जड़ता बन जाने पर वही आदत जीवन को सीमित कर देती है। सच्चा जीवन वही है जिसमें प्रत्येक क्षण को जागरूकता और नवीनता के साथ जिया जाए। आदतों से ऊपर उठकर ही मनुष्य स्वतंत्र, रचनात्मक और जीवंत बन सकता है। आदत स्वयं में न अच्छी है, न बुरी। उसका स्वरूप हमारी चेतना तय करती है। जड़ आदतें जीवन को बाँधती हैं, जबकि सजग आदतें जीवन को प्रवाह और ऊँचाई देती हैं। फैसला आपके हाथ है...

श्री सुमन सौरभ,
बहु-कार्य कर्मी

“शिक्षित युवा और बेरोज़गारी: सपनों पर बोझ, उम्मीदों का गला घोंटता दबाव”

आज का भारत युवाओं का भारत कहा जा सकता है। आज के इस दौर में प्रत्येक व्यक्ति शिक्षा हाँसिल करके आगे बढना चाहता है, नतीजतन डिग्रियाँ बढ़ रही हैं, प्रतिस्पर्धा तीव्र होती जा रही है, लेकिन अवसर उतनी ही तेज़ी से सिमटते जा रहे हैं। इस पूरे संकट के बीच सबसे ज़्यादा पिस रहा है शिक्षित युवा।

हर साल लाखों छात्र स्कूल और कॉलेज से निकलते हैं, हाथ में डिग्री, आंखों में सपने और दिल में उम्मीद लेकर। लेकिन हकीकत उनसे बेरहमी से टकराती है। सरकारी नौकरियाँ गिनी-चुनी हैं, निजी क्षेत्र में अस्थिरता है, और योग्यता के बावजूद चयन की प्रक्रिया इतनी लंबी और अनिश्चित कि युवा हताश हो जाता है। उम्र निकलती जाती है, तैयारी चलती रहती है, और समाज सवाल पूछने लगता है–“अब तक क्या किया?”

आज के समय में किसी भी युवा के लिए नौकरी पाना आसान नहीं है। नित दिन बढता कॉम्पीटशन, बढती कट ऑफ, मेरिट में आने का जूनुन, लेकिन मेरिट में नहीं पहुंच पाने की कुंठा भी युवाओं

को परेशान कर रही है। सरकारी नौकरियों के साथ-साथ युवाओं के पास भी निजी क्षेत्र में भी जाने के अवसर उपलब्ध रहते हैं।

निजी क्षेत्र को अक्सर रोजगार का विकल्प बताया जाता है, लेकिन ज़मीनी सच्चाई इससे कहीं थोडी अलग है। निजी नौकरियों में न तो भविष्य की सुरक्षा होती है, न पेंशन, न ही स्थायित्व का भरोसा। कम वेतन, अत्यधिक कार्य-दबाव, "टारगेट कल्चर" और कभी भी नौकरी चले जाने का डर युवाओं को लगातार मानसिक तनाव में जीने पर मजबूर करता है। वर्षों की पढ़ाई, महँगी कोचिंग और कठिन परीक्षाओं के बाद भी जब युवा खुद को असुरक्षित और अस्थिर स्थिति में पाता है, तो उसके भीतर निराशा और असहायता घर कर जाती है। शिक्षित युवा के साथ विडंबना यह हो जाती है कि मेहनत, योग्यता और प्रतिभा के बावजूद जब अवसर नहीं मिलते, तो युवा खुद को बेकार और बोझ समझने लगता है और यही सोच धीरे-धीरे मानसिक अवसाद का रूप ले लेती है।

इस त्रासदी का एक और भयावह पहलू मानसिक दबाव है, जो अक्सर माता-पिता और समाज की अपेक्षाओं के रूप में युवाओं पर टूट पड़ता है। कई बार अनजाने में ही माता-पिता अपने सपने, अपनी अधूरी इच्छाएँ बच्चों के कंधों पर रख देते हैं। अंकों, रैंक और "सबसे आगे" रहने की होड़ में बच्चे इंसान नहीं, एक परियोजना बनकर रह जाते हैं। हाल ही में महाराष्ट्र के चंद्रपुर से आई एक खबर ने पूरे देश की आत्मा को झकझोर दिया। मात्र 19 वर्षीय अनुराग अनिल जिसने नीट जैसी कठिन परीक्षा में 99.99 प्रतिशत अंक प्राप्त किए वह भी इस दबाव से बच नहीं सका। इतनी असाधारण सफलता के बावजूद उसने आत्महत्या जैसा भयावह कदम उठा लिया।

यह घटना एक गंभीर सवाल छोड़ जाती है कि अगर 99.99 प्रतिशत लाने वाला युवा भी सुरक्षित नहीं है, तो बाकी लाखों युवाओं की स्थिति की कल्पना करना भी डरावना है। यह साफ़ करता है कि संकट केवल असफलता का नहीं, बल्कि लगातार "और बेहतर", "परफेक्ट" बनने के अमानवीय दबाव का है। बच्चों के भीतर चल रही लड़ाई अक्सर उनकी उपलब्धियों के पीछे छिप जाती है, और जब तक हम उसे देखते हैं, तब तक बहुत देर हो चुकी होती है।

माता-पिता को यह समझना होगा कि बच्चा कोई ट्रॉफी नहीं, बल्कि एक संवेदनशील मनुष्य है। उसका मूल्य किसी परीक्षा के परिणाम, रैंक या प्रतिशत से तय नहीं किया जा सकता। संवाद, अपनापन और यह भरोसा कि "तुम जैसे हो, वैसे ही काफ़ी हो" आज यही शब्द किसी युवा की जान बचा सकते हैं। सफलता से ज़्यादा ज़रूरी है मानसिक शांति और जीवन के प्रति विश्वास। आज सफलता केवल अंकों या सरकारी नौकरी तक सीमित नहीं है।

देश-दुनिया में ऐसे असंख्य लोग हैं जिन्होंने न तो ऊँची डिग्रियाँ लीं, न ही बड़े कॉलेजों में पढ़े, फिर भी वे अपने हुनर, मेहनत और आत्मविश्वास के दम पर ऊँचे मुकाम पर पहुँचे। कोई उद्यमी बना, कोई कलाकार, कोई कारीगर, कोई डिजिटल प्लेटफॉर्म के ज़रिये आत्मनिर्भर हुआ। समस्या यह भी है कि हम बच्चों को असफलता से डरना सिखाते हैं, उससे सीखना नहीं। एक परीक्षा, एक रिजल्ट, एक चयन को पूरी ज़िंदगी का फैसला बना देते हैं। यही डर धीरे-धीरे अवसाद में बदलता है और कभी-कभी जानलेवा कदम तक पहुँचा देता है।

आज ज़रूरत है कि हम युवाओं को सुनें, समझें और उन्हें विकल्पों की आज़ादी दें। माता-पिता मार्गदर्शक बनें, मालिक नहीं। सरकार केवल रोजगार के आंकड़े न गिनाए, बल्कि गुणवत्तापूर्ण अवसर पैदा करें। शिक्षा व्यवस्था ऐसी हो जो केवल नौकरी पाने की नहीं, बल्कि जीवन जीने की कला सिखाए। अनुराग जैसे युवाओं की मौत हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि हम किस तरह का समाज बना रहे हैं, जहाँ सबसे होनहार भी खुद को असहाय महसूस करता है। अगर अब भी हमने अपनी सोच नहीं बदली तो देश का भविष्य अंधकार में चला जाएगा।

शिक्षित युवा बोझ नहीं, देश की सबसे बड़ी पूंजी हैं। उन्हें अवसर चाहिए, समझ चाहिए और सबसे ज़रूरी-बिना शर्त स्वीकार्यता। अब फैसला हमें करना है: क्या हम अगली पीढ़ी को सपने देंगे, या उन पर अपने सपनों का बोझ लादते रहेंगे?

श्री सोमदत्त यादव,
क.हिंदी अनुवादक

“भारत में वायु प्रदूषण: एक गहराता संकट और चुनौतियाँ”

‘कल-कारखानों की चिमनियां, जहर उगलती रहती हैं,
नदियां काली हो चलीं, और हवाएं सिसकी भरती हैं।
पक्षियों का वो कलरव अब, शोर में कहीं खो गया है,
स्वच्छ हवा का मीठा झोंका अब एक सपना हो गया है’।

वायु प्रदूषण कोई नई समस्या नहीं है, लेकिन पिछले कई दशकों में भारत में इसके स्वरूप और तीव्रता में जो बदलाव आया है, वह चिंता का विषय है। विश्व वायु गुणवत्ता रिपोर्ट के अनुसार, दुनिया के सबसे प्रदूषित शहरों की सूची में भारत के कई शहर शीर्ष पर हैं। यह न केवल हमारे पर्यावरण के लिए घातक है, बल्कि भारत की जीडीपी और मानव संसाधन की कार्यक्षमता पर भी विपरीत असर डाल रहा है।

भारत में वायु प्रदूषण के कारण अन्य देशों की तुलना में अधिक जटिल हैं क्योंकि यहाँ भौगोलिक, मौसमी और मानवीय कारकों का एक अलग मिश्रण है।

भारत में मध्यम वर्ग के विस्तार के साथ निजी वाहनों की संख्या में जबरदस्त उछाल आया है। पुराने वाहनों का सड़कों पर होना और सार्वजनिक परिवहन की अपर्याप्तता इस समस्या को बढ़ाती है।

पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में धान की कटाई के बाद किसान अगली फसल की तैयारी के लिए पराली जलाते हैं। अक्टूबर-नवंबर में हवा की गति कम होने के कारण यह धुआं दिल्ली-एनसीआर के ऊपर एक स्मोग की गहरी चादर बना लेता है।

भारत अपनी बिजली की जरूरतों के लिए अभी भी 70% से अधिक कोयले पर निर्भर है। इन संयंत्रों से निकलने वाला धुआं और 'फ्लाई ऐश' वातावरण को प्रदूषित करते हैं। ईंट भट्टे, छोटे पैमाने के उद्योग और रसायनों का खुला उपयोग बड़े पैमाने पर वायु प्रदूषण फैलाते हैं। भारत के बड़े शहरों में स्थित कूड़े के पहाड़ों में अक्सर आग लग जाती है, जिससे निकलने वाली मीथेन और जहरीली गैसें हवा को जहरीली बना देती हैं। वायु प्रदूषण का प्रभाव अब केवल सांस की बीमारियों तक सीमित नहीं है।

भारत में जन्म लेने वाले बच्चों के फेफड़े प्रदूषित हवा के कारण पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पा रहे हैं, जिससे उनकी भविष्य की कार्यक्षमता प्रभावित हो रही है। प्रदूषण के कारण होने वाली बीमारियों के इलाज पर खर्च और कार्यबल की अनुपस्थिति से भारतीय अर्थव्यवस्था को अरबों डॉलर का नुकसान होता है।

ओजोन और धूल के कण फसलों के प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करते हैं, जिससे फसल की पैदावार कम हो रही है। वायु प्रदूषण से निपटने के लिए हमें एक 'समग्र दृष्टिकोण' अपनाना होगा:

हमें अपनी निर्भरता कोयले से हटाकर नवीकरणीय स्रोतों (सौर, पवन) पर लानी होगी। **नेशनल ग्रीन हाइड्रोजन मिशन** इस दिशा में एक मील का पत्थर साबित हो सकता है। शहरों में 'लास्ट माइल कनेक्टिविटी' को सुधारना होगा ताकि लोग कारों के बजाय मेट्रो और ई-बसों का उपयोग करें। साइकिल ट्रैक का निर्माण और पैदल चलने योग्य फुटपाथ बनाना अनिवार्य है।

पराली की समस्या को हल करने के लिए किसानों को 'इन-सीटू' (खेत में ही प्रबंधन) मशीनरी जैसे हैप्पी सीडर और सुपर सीडर पर भारी सब्सिडी देनी चाहिए। इसके अलावा, पराली से बायो-फ्यूल बनाने के कारखानों को प्रोत्साहित करना चाहिए। नए शहरों को 'स्मार्ट सिटी' मॉडल पर विकसित करना चाहिए जहाँ औद्योगिक क्षेत्र रिहायशी इलाकों से दूर हों और हर निर्माण परियोजना में 'ग्रीन बेल्ट' का प्रावधान हो।

आज 2026 में, भारत एक ऐसे मोड़ पर खड़ा है जहाँ उसे 'विकास' और 'पर्यावरण' के बीच संतुलन बनाना ही होगा। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग करके प्रदूषण के हॉटस्पॉट्स की पहचान करना और रियल-टाइम डेटा के आधार पर तुरंत कदम उठाना अब संभव है।

वायु प्रदूषण के विरुद्ध युद्ध केवल सरकार के नियमों से नहीं जीता जा सकता। इसमें भारत के प्रत्येक नागरिक की भागीदारी आवश्यक है। जब तक हम इसे 'दूसरे की समस्या' समझेंगे, तब तक हवा जहरीली बनी रहेगी। स्वच्छ हवा हेतु सभी के साझा प्रयास आवश्यक हैं एवं इसके हेतु सभी को आगे आना होगा।

याद रखें, प्रकृति हमें चेतावनी दे रही है। यदि हमने आज अपनी हवा नहीं बदली, तो कल हमारी आने वाली पीढ़ियां सांस लेने के लिए भी 'टैक्स' चुकाने को मजबूर होंगी।

“अभी वक्त है, जाग जाओ, फिर न ये मौका आएगा,
अगर हवा न बदली आज, तो कल कौन मुस्कुराएगा?
आओ मिलकर शपथ लें, हम अंबर को साफ बनाएंगे,
आने वाली पीढ़ी को हम शुद्ध हवा दे जाएंगे”।

श्री स्वराज वर्मा,
बहु-कार्य कर्मी

<u>“पुरानी चीजों की यादें-क्या हमारा सामान भी हमसे बातें करता है?”</u>

हमारी पुरानी चीजों में बसती हमारी जान

हम एक ऐसी दुनिया में रहते हैं जहाँ पदार्थ को केवल उपभोग और विसर्जन की वस्तु मान लिया गया है। बाज़ारवाद ने हमें सिखाया है कि एक कार, एक मोबाइल, या एक मेज़, एक कलम, एक कॉपी तब तक ही मूल्यवान है जब तक वह क्रियाशील है। अक्सर हम सोचते हैं कि घर में पड़ा पुराना सामान, जैसे दादा जी की पुरानी घड़ी, माँ का संदूक या हमारा बचपन का कोई पुराना खिलौना, बस एक बेजान चीज़ है। हमें लगता है कि इनमें कोई जान नहीं है, बस इस्तेमाल किया और छोड़ दिया। लेकिन क्या आपने कभी गौर किया है कि जब आप किसी बरसों पुरानी चीज़ को अचानक अलमारी से निकालते हैं, तो उसे हाथ में लेते ही आपके दिमाग में यादों की पूरी फिल्म चलने लगती है? ऐसा लगता है जैसे वह चीज़ खुद हमें कुछ याद दिला रही हो। सच तो यह है कि हमारी इस्तेमाल की हुई हर चीज़ की अपनी एक 'याददाश्त' होती है। वे सिर्फ सामान नहीं, हमारे जीवन के साथी होते हैं। विज्ञान की भाषा में बात करें तो जिसे हम ठोस पदार्थ समझते हैं, वह वास्तव में ऊर्जा का एक सघन पुंज है।

हमारी भावनाएँ और सामान का कनेक्शन

अगर हम गहराई से सोचें, तो पाएंगे कि जब हम किसी चीज़ को सालों तक प्यार से इस्तेमाल करते हैं, तो हमारे सुख-दुख और हमारी भावनाएं अनजाने में ही उस चीज़ में बस जाती हैं। आपने देखा होगा कि जब हम किसी पुराने घर में जाते हैं, तो वहां की दीवारों को देखकर या वहां की हवा को महसूस करके ही हमें पता चल जाता है कि वहां के लोग खुश रहते थे या हमेशा झगड़ते थे। वह जगह या सामान वहां रहने वालों की हंसी और उनके आँसुओं को अपने अंदर सोख लेता है। इसीलिए कुछ पुरानी चीजों को हाथ लगाते ही हमें एक अलग तरह का सुकून महसूस होता है, जैसे किसी ने हमारे कंधे पर प्यार से हाथ रख दिया हो।

सामान जो कभी झूठ नहीं बोलता

इंसान तो अपनी बातें छिपा सकता है, दुनिया के सामने झूठी मुस्कान ला सकता है, लेकिन उसका सामान हमेशा सच बोलता है। एक पुराना पेन, जो बरसों से आपके पिता की जेब में रहा हो, उसने सिर्फ कागज़ पर स्याही नहीं छोड़ी, बल्कि उसने उनके संघर्ष, उनकी मेहनत और उनके पसीने को भी करीब से देखा है। अगर हमारे कमरे का फर्नीचर, हमारी मेज़ या अलमारी बोल सकती, तो वह हमारे बारे में ऐसी बातें बताती है जो शायद हम खुद भी भूल चुके होते हैं। हमारे घर की दीवारों ने उन प्रार्थनाओं को सुना है जो हमने आधी रात को बंद होंठों से की थीं, और उन आंसुओं को देखा है जिन्हें दुनिया के सामने कभी बहने नहीं दिया गया। वे हमारे उन पलों के साथी रहे हैं जब दुनिया हमारे साथ नहीं थी। वे जानते हैं कि हम अकेले में क्या सोचते हैं, किस बात पर रोते हैं और किस बात पर

मुस्कुराते हैं। वे हमारे उन राज़ों के रखवाले होते हैं जो हमने किसी को नहीं बताए होते हैं।

बीते कल से जुड़ा एक अनोखा रिश्ता

हम बीते हुए कल में वापस तो नहीं जा सकते, हमारे पास कोई असली टाइम मशीन तो नहीं है, लेकिन ये पुरानी चीजें हमारे लिए 'टाइम मशीन' का ही काम करती हैं। जैसे ही हम पिता जी की पुरानी घड़ी पहनते हैं या माँ की शादी की पुरानी साड़ी को हाथ लगाते हैं, हम पल भर में बीस-तीस साल पीछे बचपन में पहुँच जाते हैं। वह खुशबू, वह अहसास हमें उन गलियों में ले जाते हैं जहाँ हम कभी बेफिक्र होकर घूमा करते थे। यह घड़ी सिर्फ समय नहीं बताती, बल्कि यह हमें उस इंसान की यादों से जोड़कर रखती है जो अब शायद हमारे पास नहीं है। ये चीजें एक पुल की तरह होती हैं जो हमारे परिवार की कहानियों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का काम करती हैं।

एक नया नज़रिया

आजकल का ज़माना 'इस्तेमाल करो और फेंको' का है। हम मोबाइल बदलते हैं, कपड़े बदलते हैं और पुरानी चीजों को कचरा समझकर बाहर कर देते हैं। लेकिन सोचिए, क्या उन नई चीजों में वो अपनापन मिल पाता है? शायद नहीं। बहुत से लोग मानते हैं कि जब हम किसी चीज़ का सम्मान करते हैं और उसे प्यार से सहेज कर रखते हैं, तो वह चीज़ भी हमें एक सकारात्मक ऊर्जा देती है। पुरानी चीजों में एक ठहराव होता है, एक शांति होती है जो आजकल की भागदौड़ वाली चीज़ों में नहीं मिलती। आज के समय में हम क्लाउड स्टोरेज और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की बड़ी-बड़ी बातें करते

हैं, लेकिन प्रकृति ने सृष्टि के निर्माण के साथ ही हर कण को सूचनाएं संचित करने की अद्भुत क्षमता प्रदान की है।

निष्कर्ष: सामान का शुक्रिया

हमें अपने सामान को सिर्फ 'प्लास्टिक', 'मिट्टी' या 'लोहा' नहीं समझना चाहिए। वे हमारी जिंदगी का एक ऐसा हिस्सा बन चुके होते हैं जो बिना बोले हमें बहुत कुछ सिखा जाते **हैं। जापानी संस्कृति में 'सुकुमोगामी' (Tsukumogami) की एक लोककथा है, जिसके अनुसार जब कोई वस्तु सौ वर्ष की हो जाती है, तो उसमें अपनी एक आत्मा बस जाती है। वे हमें याद दिलाती हैं कि हम कहाँ से आए थे और हमारा सफर कैसा रहा। अगली बार जब आप घर की सफाई करें और किसी पुरानी चीज़ को 'कबाड़' समझकर बाहर फेंकने का मन बनाएं, तो एक पल रुकें। उसे ज़रा प्यार से छुएं और उसे महसूस करें। शायद वह पुराना टूटा हुआ खिलौना या वह घिसा हुआ चश्मा आपके पुराने दिनों का सबसे सच्चा दोस्त हो, जो बस आपके एक स्पर्श का इंतज़ार कर रहा हो।**

श्री हिमांशु काश्यप धर्मदर्शी,
प्रधान महालेखाकार

"स्वतंत्रता से पहले की पुकार फ़िल्म 'क़िस्मत' का अमर देशभक्ति गीत"

15 अगस्त और 26 जनवरी, हमारे दो प्रमुख राष्ट्रीय पर्वों की एक मधुर स्मृति है, जिसकी चारों ओर, गलियों और चौपालों से लेकर सरकारी भवनों तक, सुनाई देती देशभक्ति गीतों की मधुर गूंज।

आजकल यह परंपरा कुछ कम हो गई है, फिर भी कई स्थानों पर, विशेषकर जहाँ ध्वजारोहण होता है, वहाँ सरकारी दफ़्तरों में देशभक्ति के फ़िल्मी गीत अवश्य सुनने को मिलते हैं। आपने यह भी गौर किया होगा कि इनमें से ज़्यादातर गीत हिंदी फ़िल्मों के होते हैं। देशभक्ति के गीतों का बहुत बड़ा संग्रह है, लेकिन एक विशेष बात यह है कि इनमें से अधिकांश गीत भारत को आज़ादी मिलने के बाद के पहले दो दशकों में बनाए गए थे। जब देश को नई-नई स्वतंत्रता मिली हो, तब देशभक्ति गीत लिखना अपेक्षाकृत आसान होता है।

लेकिन अंग्रेज़ी शासन के समय देशभक्ति गीत लिखना न केवल कठिन, बल्कि एक जोखिम भरा कार्य था। अंग्रेज़ शासकों को ऐसे गीत बिल्कुल पसंद नहीं थे। सेंसर बोर्ड ऐसे गीतों पर तुरंत रोक लगा देता था और लेखक-कवि पर कार्रवाई भी हो सकती थी। गुलामी के दौर में देशभक्ति गीत लिखना बेहद ख़तरनाक माना जाता था। उसी समय बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय की पुस्तक 'आनंद मठ' पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया था, क्योंकि उसमें स्वतंत्रता की भावना थी। 'वंदे मातरम्' गीत इसी पुस्तक से लिया गया है।

आज सुबह रेडियो पर अन्य गीतों के साथ एक विशेष देशभक्ति गीत सुनने को मिला। आश्चर्य की बात यह है कि गुलामी के कठिन समय में यह ऐसा एकमात्र देशभक्ति गीत था जिस पर अंग्रेज़ सरकार ने प्रतिबंध नहीं लगाया। यह गीत सेंसर की नज़र से पूरी तरह बच गया और सबसे हैरान करने वाली बात यह है कि यह गीत भारत की आज़ादी से पहले, सन् 1943 की एक फ़िल्म में पहली बार गाया गया था। 1943 में एक ऐसी फ़िल्म आई जिसने इतिहास रच दिया। उस फ़िल्म का नाम था – 'क़िस्मत'।

यह फ़िल्म भावनाओं से भरे शब्दों और प्रभावशाली संगीत से सजी हुई थी। अशोक कुमार की लोकप्रिय अभिनय शैली और अमीरबाई कर्नाटकी की गूंजती आवाज़ ने इसे अमर बना दिया। उस समय इस फ़िल्म ने लोकप्रियता के सभी रिकॉर्ड तोड़ दिए। कोलकाता के रॉक्सी थिएटर में यह फ़िल्म लगातार तीन साल और आठ महीने तक चली। जो भारतीय सिनेमा के इतिहास में एक अनोखी घटना थी।

फ़िल्म 'क़िस्मत' की आत्मा थी, उसके गाने।

'धीरे-धीरे आ रे बादल हो',
'अब तेरे बिना कौन मेरा कृष्ण कन्हैया रे',
'दुनिया बता हमने बिगाड़ा है क्या तेरा',
और
पपीहा रे मेरे पिया से कहियो जाए रे'।

ये सभी गीत घर-घर में गूंजने लगे। इनके रिकॉर्डों ने पुराने सभी रिकॉर्ड तोड़ दिए। लेकिन इन सभी गीतों में सबसे श्रेष्ठ साबित हुआ एक ही गीत। वह था,

"आज हिमालय की चोटी से फिर हमने ललकारा है,
दूर हटो ऐ दुनिया वालों हिन्दुस्तान हमारा है"!

इस गीत के शब्द प्रदीप ने लिखे थे और संगीत अनिल बिस्वास ने दिया था। प्रदीप केवल फिल्मी गीतकार नहीं थे, बल्कि सच्चे अर्थों में एक साहित्यकार थे। वे दिल को छू जाने वाले, सरल और सच्चे शब्दों के लिए जाने जाते थे। भक्ति, जीवन-दर्शन और देशप्रेम से भरे उनके गीतों में काव्य, अलंकार और भावों की सुंदर रचना दिखाई देती है। उनके कुछ अन्य प्रसिद्ध गीत हैं,

'आओ बच्चों तुम्हें दिखाएँ',

'हम लाए हैं तूफ़ान से कश्ती निकाल के',

'साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल' (फ़िल्म - जागृति)

इस गीत का प्रभाव इतना गहरा था कि दर्शकों की माँग पर इसे बार-बार सिनेमाघरों में दिखाना पड़ा। जेल में बंद स्वतंत्रता सेनानी इस गाने को गुनगुनाते थे, ताकि उनके भीतर की देशभक्ति की लौ बुझ न जाए। एक तरह से कहा जा सकता है कि हिंदी फ़िल्मों में बना यह शायद पहला देशभक्ति गाना था, जो आज भी हर उम्र के भारतीयों को प्रेरणा देता है।

स्वाभाविक रूप से यह गाना ब्रिटिश सरकार को पसंद नहीं आया। उन्हें यह सरकार के ख़िलाफ़ विद्रोह जैसा लगा। आखिरकार यह गीत जब्त कर लिया गया और गीतकार प्रदीप पर 'डिफेन्स ऑफ़ इंडिया रूल्स' की धारा 26 के अंतर्गत कार्रवाई की संभावना बन गई। इस मामले की जाँच अधिकारी धर्मेंद्र गौड़ को सौंपी गई। उन्होंने कई बार फ़िल्म देखी और अपनी रिपोर्ट में लिखा

"इस गीत में प्रदीप ने जर्मनी और जापान को निशाना बनाया है, अंग्रेज़ों को नहीं। प्रदीप धोती-कुर्ता पहनते हैं, लेकिन वे न तो

कांग्रेसी हैं और न ही क्रांतिकारी।" इस रिपोर्ट के बाद मामला बंद कर दिया गया।

वास्तव में प्रदीप बहुत दूरदर्शी थे। उन्हें पहले से अंदाज़ा था कि अंग्रेज़ सरकार को यह गीत गले में कांटे की तरह चुभेगा। इसलिए उन्होंने बड़ी चतुराई से गीत में एक पंक्ति जोड़ दी –

"तुम न किसी के आगे झुकना, जर्मन हो या जापानी।"

यही एक पंक्ति गीत को बचाने का मजबूत आधार बन गई। ऊपरी तौर पर तो लगता था कि यह गीत जर्मनी और जापान के साम्राज्यवाद के विरोध में है, लेकिन अंदर से उसका असली, अंतर निहित अर्थ भारतवासी भली-भाँति जानते थे।

आज हिमालय की चोटी से फिर हमने ललकारा है।
दूर हटो ऐ, दूर हटो ऐ, दूर हटो
ऐ दुनिया वालों हिन्दुस्तान हमारा है।

जहाँ हमारा ताजमहल है और कुतुब मीनारा है
जहाँ हमारे मंदिर, मस्जिद, सिखों का गुरुद्वारा है

इस धरती पर क़दम बढ़ाना अत्याचार तुम्हारा है
दूर हटो ऐ दुनिया वालों हिन्दुस्तान हमारा है।

शुरू हुआ है जंग तुम्हारा, जाग उठो हिन्दुस्तानी
तुम न किसी के आगे झुकना, जर्मन हो या जापानी

आज सभी के लिए हमारा यही कौमी नारा है
दूर हटो ऐ दुनिया वालों हिन्दुस्तान हमारा है।

आज हिमालय की चोटी से फिर हमने ललकारा है।
दूर हटो ऐ, दूर हटो ऐ, दूर हटो ऐ
दुनिया वालों हिन्दुस्तान हमारा है।

अनिल बिस्वास के संगीत निर्देशन में अमीरबाई कर्नाटकी की स्वर्णिम आवाज़ ने इस गीत को समय और पीढ़ियों की सीमाओं से मुक्त कर दिया। धीरे-धीरे यह गीत स्वतंत्रता सेनानियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन गया।

लेखक विश्वास गुप्त लिखते हैं –
"इस गीत ने 1942 के 'हिन्द छोड़ो आंदोलन' के बाद जनता में नई चेतना जगाई और देश के युवाओं में मानो नया जीवन दे दिया।"

आज भी यह गीत हमें यह याद दिलाता है कि स्वतंत्रता केवल एक तिथि नहीं, बल्कि एक सतत आह्वान है।
"दूर हटो ऐ दुनिया वालों, हिन्दुस्तान हमारा है।"

“कार्यालयी पत्रिका “गिरनार के 40 वें अंक का विमोचन”

मा. श्री हिमांशु काश्यप धर्मदर्शी, प्रधान महालेखाकार महोदय के साथ-साथ श्री कल्याण कुमार कीर्तनीया, प्रधान निदेशक, कार्यालय स्थानीय शासन लेखापरीक्षा (LGA), राजकोट, श्री डेनिस डेनियल, महालेखाकार/प्रशासन एवं श्री नेमा राम, उप महालेखाकार/एफएवी, व श्री संजय अनडकट, कल्याण अधिकारी कार्यालय की पत्रिका “गिरनार” के 40 वे अंक का विमोचन करते हुए।

दूधपाक एक पारंपरिक गुजराती मिठाई की रेसिपी

सामग्री-

दूध: 1 लीटर, चावल 2-3 चम्मच**,** चीनी (Sugar): ½ कप या स्वादानुसार, घी (Ghee): 1 चम्मच (चावल को कोट करने और बर्तन के तले में लगाने के लिए), चिरौंजी : 1 से 2 चम्मच,

इलायची पाउडर: ½ चम्मच**,** सूखे मेवे : 1-2 चम्मच कटे हुए बादाम और पिस्ता, केसर (Saffron): 8-10 धागे (थोड़े गर्म दूध में भिगोए हुए, वैकल्पिक लेकिन रंग और खुशबू के लिए बेहतर)।

बनाने की विधि-

दूधपाक एक पारंपरिक गुजराती मिठाई है। यह अपने लाजवाब स्वाद और बनावट के लिए प्रसिद्ध है। इसे दूध, बासमती चावल, चीनी, इलायची, केसर और बादाम, पिस्ता, किशमिश आदि जैसे सूखे मेवों और थोड़ी से देसी घी से तैयार किया जाता है। दूध (चावल और चीनी के साथ) को धीमी आंच पर पकाया जाता है और गाढ़ा होने तक पकाया जाता है, जिससे यह सुंदर, गाढ़ी बनावट प्राप्त होती है और इसका स्वाद और भी बढ़ जाता है। केसर की हल्की सी महक और बादाम के पेस्ट की हल्की सी दरदरी बनावट इसे और भी स्वादिष्ट बनाती हैं। सूखे मेवों और इलायची पाउडर से सजाकर, नरम, फूली हुई, गरमागरम पूरियों के साथ परोसा गया दूधपाक खाने के लिए तैयार है।

मोरबी रियासत

मोरबी (Morbi)या मोरवी (Morvi) भारत के गुजरात राज्य के मोरबी ज़िले में स्थित एक नगर है। यह ज़िले का मुख्यालय भी है। मोरबी मच्छु नदी के किनारे बसा हुआ है। मोरबी राजकोट से मात्र 64 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। भारत के स्वतंत्र होने से पहले यह देशी राज्य पूर्वी कठियावाड़ सबएजेंसी के अधिकार में था। इसका क्षेत्रफल 822 वर्ग मील था। यहाँ के शासक (पदवी ठाकुर) जडेजा राजपूत थे और अपने को कच्छ के राव का वंशज मानते थे। फरवरी 15, 1948 ई. में यह सौराष्ट्र में मिला दिया गया। अब यह क्षेत्र गुजरात राज्य में है। मयूरध्वज मोरबी के राजा थे। 1979 में आई बाढ़ के कारण मोरबी निर्जन हो गया था। इसके सभी ऐतिहासिक स्मारकों को बाढ़ ने जर्जर कर दिया था। लेकिन अब मोरबी ने एक बार फिर से टाइल्स व घडी बनाने के कार खाने के बल पर अपने को खडा कर लिया है।

मोरबी प्राचीन जडेजा राजपूतों की राजधानी था। वर्तमान मोरबी का नगर विन्यास वाघ जी का देन है। उन्होंने 1879 से 1948 ई. तक यहां शासन किया था। सर वाघ जी ने सड़कों और सात मील लम्बे वढ़वाड तथा मोरबी को जोडने वाले रेलमार्ग का निर्माण करवाया। उन्होंने नमक और कपडे का निर्यात करने के लिए दो छोटे बंदरगाहों नवलखा और ववानिया का भी निर्माण करवाया। मोरबी का रेलवे स्टेशन स्थापत्य शैली का सुन्दर उदाहरण है जिसमें भारतीय और यूरोपीय स्थापत्य कला का अनूठा संगम देखने को मिलता है।